पाँचो घी में

बिन्ध्याचल प्रसाद गुप्त

लम्बी मूँछों की जय !

मूछें ऊँची रहें हमारी....
इसकी शान न जाने पाये
चाहे जान भले ही जाये....
जेबें भारी रहें हमारी....

दृढ़ संकल्पी महापुरुष थे बाबू सूरतसिंह।

गोल मुखड़ा फुटबाल की तरह।

कड़ी कड़ी मूँछें—नाक और ऊपरी ओंठ के बीच जैसे सटे हुए दो बिच्छू।

भालू की तरह मोटे-मुसटण्डे।

कुल शरीर का वजन—दो मन पच्चीस सेर।

चुटिए की लम्बाई—अट्ठारह इंच।

आदत—ओंठ चबाना और डींग हाँकना....

विशेष गुण—आड़े हाथों लेना, सब्जबाग दिखाकर अपना उल्लू सीधा करना और चैन की वंशी बजाना....

मरते-मरते भी उस वीर पुरुष ने छल के मुक्के से दुश्मनों के दाँत खट्टे कर दिये और मूँछों पर ताव देते हुए यमराज को प्राण सौंपे....और औलाद भी छोड़ गये....

'बाबू मूरतसिंह'

योग्य पिता के योग्य पुत्र।

रंग में जरूर फर्क है, मगर स्वभाव में अपने पिता के समान ही टट्टी की ओट में शिकार तो खेलते ही हैं, किन्तु गिरगिट की तरह रंग बदलने में भी सिद्धहस्त....

'हाथी के दाँत खाने के और, दिखाने के और' वाली कहावत चरितार्थ करने में कमाल हासिल....

प्रस्तुत उपन्यास 'पाँचो घी में' आपके मनोरंजक चरित्र के केवल पन्द्रह अध्यायों का सचित्र, विचित्र और पवित्र पिटारा है।

सरकार ने बाबू मूरतसिंह की जमींदारी भी ले ली....मगर बाबू मूरतसिंह की लम्बी मूँछें अपनी जगह पर हैं।

पहले की भाँति ही नाक की ऊँचाई है।

अब भी उनकी पाँचो उँगलियाँ घी में हैं।

अब भी कोंहड़ापुर निवासी उनकी मूँछों का लोहा मानते हैं।

उनकी मूँछों से नफरत करनेवाले भी हैं, मगर विशेष अवसर पर उन निरीह प्राणियों को भी नारा लगाना ही पड़ता है—

'लम्बी मूँछों की जय!'

कनफुसकी टेलिफोन से अभी-अभी खबर मिली है—

आगामी चुनाव में बाबू सूरतसिंह के सुपुत्र बाबू मूरतसिंह विधान पार्षद (एम० एल० ए०) बनने के लिए एड़ी का पसीना चोटी तक बहाने के लिए तैयार हैं। जो चुनाव के दंगल में उनकी सहायता करेगा, उसे वे चाँदी के जूते के साथ महीने में दो सेर चने और प्रति दिन चार घूँसे देंगे...

ठकुरसोहाती पसन्द करनेवालों अथवा बाबू मूरतसिंह की ऊँची नाक और लम्बी मूँछों से प्रेम करनेवालों को अभी से कमर कस कर, गले की नस तोड़ते रहना चाहिए—

लम्बी मूँछों की जय!

सूरतसिंह—मूरतसिंह जिंदाबाद!!

विनीत,

चनपटिया, चम्पारन } विन्ध्याचल प्रसाद गुप्त,

१२—२—५६

बड़े सरकार—छोटे सरकार

"ढुनढुनवा !" गाँजा का दम लगा कर बोल उठे बाबू मूरतसिंह ।

"जी सरकार !"

बाबू मूरतसिंह की खिदमत में आधी उम्र गुजारने वाला ढुन-ढुनवा, उत्साह से भर गया । बाँछें खिल गईं ।

कोंहड़ापुर गाँव में 'जहाँ गाछ न बिरीछ तहाँ रेंड़ परधान' वाली कहावत कोई चरितार्थ करता है तो वे महापुरुष हैं बाबू सूरतसिंह के सुपुत्र बाबू मूरतसिंह ।

लोग अभी भी कानों में कहा करते हैं—चम्पारण में गांधीजी को लाने वाले (!) नीलहा कोठी के एक साहब के दाहिने हाथ थे बाबू सूरतसिंह और बाप के कान काटने वाले निकले हैं बाबू मूरतसिंह ।

"गार्डन साहब अलबत्ता मानता था बाबू जी को...."

बाबू मूरतसिंह मुँह से धुआँ उगलते जा रहे हैं ।

"इसमें भला क्या शक है सरकार !"

ढुनढुनवा, मूरतसिंह के पाँव गोद में रख, बड़े प्रेम से दबाने लगा मानों वे हाथी के पाँव जैसे पाँव मसनद हों ।

"बाबू जी जब तक गार्डन साहब को झुक-झुक कर दस बार सलाम नहीं कर लेते थे, वह खाने के लिए काँटा और चम्मच नहीं उठाता था ।"

"सवा सोलह आने सच है धर्मावतार !"

"और उसकी मेम जबतक बाबूजी की पगड़ी से अपनी खूब-सूरत जूती नहीं झड़वा लेती थी, तबतक बँगले के बाहर कदम नहीं बढ़ाती थी।"

"कैसे कदम बढ़ाती सरकार! बाबू सूरतसिंह...."

भय से टुनटुनवा ने जीभ दाँतों तले दबा ली। बोला—"धत्.... मेरी ज़ुबान में आग लगे, बड़े सरकार की पगड़ी की इज्जत जबतक जूती के स्पर्श से बढ़ नहीं जाती, तबतक मेम को चैन कहाँ मिलता!"

टुनटुनवा के मुँह की बात छीन कर, सूरतसिंह बोल उठे—"और यह बात नहीं थी कि बाबूजी साहब और मेम से नफरत करते थे!"

"वाह, कौन मूर्ख भला ऐसा कहेगा!"

सूरतसिंह, टुनटुनवा की बात पर कान दिये बगैर बोल उठे—"साहब के लिए बेगार करने में जो उजड्ड चीं-चपड़ करता था, बाबूजी उसकी गरदन की मैल छुड़ा देते थे!"

"केवल गरदन की मैल!" टुनटुनवा बोल उठा—"सरकार! वैसे बागियों के लिए तो बड़े सरकार साक्षात् यमराज बन जाते थे। मेरे बाप एक दिन बड़े सरकार के विषय में कह रहे थे—तेरे सरकार के बड़े सरकार ऐसे गुस्सैल थे कि जो जी में आता था, कर गुजरते थे। एक दिन कोहड़ापुर का एक बूढ़ा बुखार में था। बड़े सरकार ने कहा, ओ बूढ़े, बहाना बनाकर घर पड़ा है। खेत में चल, नहीं तो सिर के एक-एक बाल बीन लूँगा।

"बूढ़ा अंगारों पर लोटने लगा। उसने बड़े सरकार के खिलाफ सिर उठाया। एकदम मुँह से उगल बैठा—तुम कसाई हो कसाई। गाँव के गाय-बैल जैसे निरीह अपने भाइयों को विदेशी फिरङ्गी जैसे बाघ के मुँह में झोंकते हो....

"बस, बड़े सरकार को जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया। वे नाक

पर मक्खी नहीं बैठने देते थे फिर उस बूढ़े कमीने की बात कैसे सहन करते ? गुस्से में बूढ़े की चुटिया पकड़ लात और जूतों से उसकी मरम्मत करने लगे। बीमार बूढ़ा थोड़ी देर में ही दाँत निपोर, भगवान से फरियाद करने चला गया।....

"मगर बड़े सरकार का गुस्सा था—उतने पर कैसे शांत होता....

"आगे देखा न पीछे और बड़े सरकार ने बूढ़े की झोपड़ी में आग लगवा दी। बूढ़े का शव आग की लपटों में स्वाहा हो गया, मगर आग गाँव में फैल गई।

"अपने घरों को आग की लपटों में देख, कोंहड़ापुर निवासियों के दिमाग का पारा चढ़ गया। वे अगिया बैताल की तरह अंगारों पर लोटते हुए, लाठी उठाये, बड़े सरकार की ओर दौड़ पड़े।

"बड़े सरकार आखिर बड़े सरकार थे! वे पाँव पटकते साहब के बँगले में पहुँचे और मुँह बना-बना कर, झुक-झुक कर सलाम करते हुए बोले—हुजूर, गजब हो गया। गाँव के लोग १८५७ की तरह बागी हो गये। वे आपका बँगला लूटने आ रहे हैं।

"मेम घबड़ा उठी। बोली—और गाँव में आग कैसे लगी ?

"बड़े सरकार ने कहा—'मेमसाहिबा! यहाँ के निवासी पूरे 'चार सौ बीस' हैं। अपना घर आपही फूँक आपके बँगले को लूटने और फूँकने आ रहे हैं।

"साहब ने बन्दूक सँभाल कर, कहा—एक-एक को गोली मार दूँगा।"

"बड़े सरकार ने कहा—सरकार! तार देकर सेना बुला ली जाय। बागियों की संख्या बहुत अधिक है।

"मेम बोली—बहुत ठीक कह रहा है सूरतसिंह।

"बड़े सरकार ने झुक-झुक कर, मेम साहब को सात बार सलाम किये। गद्गद् स्वर में बोले—मेम साहिबा की उम्र बड़ी हो।

"और साहब ने बड़े सरकार की राय से एक सिक्ख घुड़सवार को भेजकर सेना बुलवा ली। फिर तो गाँव वालों की हालत देखने लायक थी। 'एक तो गिरे गाछ से ऊपर से गिरी मुगरी' वाली कहावत चरितार्थ हो रही थी।

"कोड़े की मार खा-खा कर, मरद सर पर पाँव रख कर भाग गये और भोली स्त्रियाँ फिरङ्गियों की कैद में चीखती, चिल्लाती रहीं।

"हा-हा-हा-हा!" बाबू मूरतसिंह खिलखिला उठे। बोले—गाँव वाले चले थे बाबूजी पर हाथ उठाने, कैसा फल मिला?'

"सरकार!" टुनटुनवा बोला—"उसके बाद यह हालत हो गई कि बड़े सरकार दिन को कहते कि रात है तो गाँव वाले कहते बेशक धर्मावतार, अपना ही हाथ नहीं सूझता; और आम को कहते कि यह इमली है तो गाँव वाले चिल्ला उठते—गरीबपरवर सवा सोलह आने सच कह रहे हैं।"

"वाह, भला किसमें साहस था जो मेरे बाबूजी के खिलाफ ज़ुबान भी हिलाता!" मूरतसिंह बोल उठे—"बाबूजी के रोब का वह भूत अभी तक कोंहड़ापुर के निवासियों के सर पर सवार है।"

"और आपका रोब बड़े सरकार के रोब से क्या कुछ कम है सरकार!" टुनटुनवा ने कहा—"बड़े सरकार की लात खाकर तो कभी कोई बच भी जाता था, मगर सरकार के क्रोधरूपी साँप के डँसने से तो कोई उठकर पानी भी नहीं पी सकता।"

बाबू मूरतसिंह गंभीर हो उठे, मूँछों पर हाथ फेरते हुए उन्होंने हुक्म दिया—"चिलम तो बढ़ा दे!"

टुनटुनवा ने गाँजे पर रस्सी की आग रखकर, चिलम मूरतसिंह के हाथों में पकड़ा दी। कश खींचकर धुएँ का गुबार मुँह से उगलते-उगलते मूरतसिंह ने कहा—"टुनटुनवा!"

"जी सरकार!"

टुनटुनवा जल्दी-जल्दी मूरतसिंह के पाँव दबाने लगा। हैं....हैं....हैं....हैं....हँसते-हँसते बाबू मूरतसिंह उत्साह से भर गये।

बोले—"टुनटुनवा !...."

"सरकार !"

"जब गोरों की सरकार थी, उसके खिलाफ सर उठाने वालों को मैं छठी का दूध याद कराया करता था और जब अपनी सरकार हुई तब गांधी-टोपी पहन कर देशभक्त बन बैठा।"

"बड़े सरकार के खून का असर है धर्मावतार। बाँस से बाँस ही उपजता है। बबूल से—नहीं, नहीं—आम से बबूल नहीं होता।"

"तू तो आजादी की खबर सुनते ही मूर्च्छित होते-होते बचा था रे।"—मूरतसिंह ने कहा—"मुझे अभी तक वह दिन याद है। तेरे चेहरे पर हवाइयाँ उड़ रही थीं और तू ने भय से व्यग्र स्वर में कहा था, सरकार! अब तो काँग्रेस वाले आपको फाँसी पर लटका देंगे...."

टुनटुनवा अपने स्वामी के मुँह की बात छीन कर बोल उठा—"सरकार! भय का भूत सर पर सवार क्यों नहीं होता? कोई स्वयं-सेवक गाँव में मुठिया के लिए निकलता तो आप उसे अपने सिपाहियों से पकड़वा मँगाते और मारे जूतों के हुलिया बिगाड़ देते। कोई पिके-टिंग के लिये शराब की दुकान के सामने कदम रखता और उस पर आप मन का बुखार उतारने लगते। मुझे याद है—पाँच स्वयंसेवक नमक-कानून तोड़ने के लिये नमक बना रहे थे और आप गोरों को खुश करने के लिये अगियाबैताल बने वहाँ जा पहुँचे थे। आपके हाथ में बेंत की एक मोटी-सी छड़ी। आपने उस छड़ी से स्वयंसेवकों को रुई की तरह धुनना जो आरंभ किया तो मजा आ गया। कोई जमीन पर कटे पेड़ की तरह गिर पड़ा तो कोई जबह किये मुर्गे की तरह तड़पने लगा। उसी दिन पता लगा, आपके हाथ में गजब की ताकत है...."

"हो-हो-हो-हो...." हँस पड़े बाबू मूरतसिंह।

"टुनटुनवा !"

"जी सरकार।"

"तुमने उस दिन मेरा हाथ पकड़ लिया, नहीं तो मैं पाँचों की जान लेकर ही दम लेता।"

"सरकार !" टुनटुनवा बोल उठा—"हरिचरण आपसे पिट कर चारपाई पर गिरा तो उठा कहाँ ?"

"ठीक कहते हो।" मूरतसिंह ने कहा—"मगर उस दिन तू ने मेरा हाथ पकड़कर भूल की। मेरे मन का गुबार निकल न सका। काश, हरिचरण की तरह बाकी चारो भी जहन्नुम की हवा खाते !"

"जहन्नुम ?" टुनटुनवा ने अचरज से कहा—"गुस्ताखी माफ हो, आप यहाँ गलती कर रहे हैं। आप जैसे महापुरुषों के हाथों प्राण गँवाने वालों को जहन्नुम नहीं, बैकुंठ मिलता है सरकार !"

"जो कुछ हो।" मूरतसिंह ने कहा—"आज वे बेईमान धरती पर नहीं होते तो पीठ पीछे मेरी निन्दा नहीं होती; कोई फुस-फुसाकर मुझे गिरगिट की तरह रंग बदलने वाला नहीं कहता।"

"धर्मावतार ! सवा सोलह आने सच है।" टुनटुनवा आवेश में भर गया—"वे सभी एक नम्बर के चुगलखोर हैं। कहते फिरते हैं, लात-जूते और जेल-कष्ट सहने के लिये हमलोग थे और दूध से कुल्ला करने का समय आया तो बाबू मूरतसिंह टपक पड़े !"

"बकने दो। हाथी चले बजार, कुत्ता भूँके हजार।"

"उन्हें तो तोप से उड़ा देना चाहिए था।"

"हूँह....चले न जाने आँगन टेढ़" मूरतसिंह बोल उठे—"वे महा-मूर्ख हैं। मुझसे मिलकर रहते तो उनकी पाँचों उँगलियाँ घी में रहतीं। अब तो वे कौड़ी के तीन हैं।"

"यह आपकी कृपा का फल है !"

"नहीं जी, सब उलटा उस्तुरा की करामात है। हा....हा....हा....

हा....'' बाबू मूरतसिंह अपनी हँसी लुटाने लगे। अचानक उनकी हँसी रुक गई। मानस-पट पर किसी की मीठी याद बिजली बनकर कौंध गई।

"टुनटुनवा!" उन्होंने मन्द स्वर में कहा—"भूखला की औरत रात क्यों नहीं आई?"

"वह आई होगी सरकार।" टुनटुनवा के कान खड़े हुए—"आप नींद में बेखबर होंगे।"

"नहीं रे, मैं तो उसकी राह ही देखता रह गया।"

"सरकार! उसकी यह मजाल!" टुनटुनवा आवेश में बोल उठा—"मैं उसका झोंटा नोंच लूँगा। वह मुझे समझती क्या है!"

"कहीं दाल में काला है।"

"वह क्या सरकार?"

"यह तो उससे पूछने पर ही मालूम होगा।"

"हुक्म हो तो उसके घर का चक्कर लगा आऊँ?"

"जा सकते हो!"

"वह तो कुँए की ओर आ रही है सरकार! वह देखिये, कमर पर गागर है।"

बाबू मूरतसिंह ने उचक कर कुँए की ओर देखा। मुँह में पानी भर आया। बोल उठे—"आज तो साली बड़ी बनी-ठनी है। माथे पर टिकली तो गजब ढा रही है।"

"साली है ही बड़ी हसीन।"

"बको मत!" मूरतसिंह गुर्रा उठे—"बाल्टी और डोरी लेकर, झट कुएँ पर पहुँच जाओ।"

"जो हुक्म सरकार।"

"उससे आज रात में आने के लिये मेरा हुक्म सुना देना।"

"वह डाँट बताऊँगा कि वह सर के बल आयेगी।"

"जाओ जल्दी।"

और ढुनढुनवा पानी से भरी बाल्टी लिये जब लौटा, उसका चेहरा तमतमाया हुआ था। बोला—

"सरकार! चींटी के पर निकल आये।"

"बात क्या है रे?" मूरतसिंह उसका मुँह निहारने लगे।

"इसीलिए भूखला ने जग्गूसाह से अपना खेत बेंचा और आपका कर्ज चुकाया।"

"किसलिये रे?"

"सरकार! भूखला के पेट में दाँत जम गये।"

"गधा कहीं का! बुझौवल बुझाता है। साफ-साफ कहता नहीं।"

"धर्मावतार! अब वह साली नहीं आयेगी। भूखला ने उसे मना कर दिया है।"

"काठ का उल्लू! अभी तो भूखला के पाँच निशान मेरे पास हैं।" मूरतसिंह बोल उठे—"उसे जीवन भर नाकों चने चबवा सकता हूँ। जा, मुंशीजी से मेरा हुक्म सुना दे—बेईमान पर पाँच सौ रुपये की नालिश ठोंक दें।"

"मुंशीजी तो सरकार से छुट्टी लेकर कल ही ससुराल गये हैं।"

"तो उनके आने तक धीरज रख।"

"मेरी छाती पर साँप लोट रहा है सरकार।"

"घबड़ा मत! बेईमान के घर पर हल चलवा कर तोरी जो न छिंटवाया तो अपने असल बाप नहीं।"

"धन्य सरकार! आपने छाती ठंडी कर दी। जिस पर आपकी नजर टेढ़ी हो जाय भला उसकी कुशल कहाँ!"

"गरीब महरा ने मेरे खिलाफ सर उठाया, उसका क्या फल निकला, तुझे याद है न ढुनढुनवा?"

"खूब याद है सरकार, मैंने ही तो उसके घर की जमीन पर आलू रोपा था।"

"हाँ रे, तुझे तो याद है।" मूरतसिंह उसकी स्मरण शक्ति पर मुग्ध हो उठे।

"सरकार!" टुनटुनवा उमंगों से खेलने लगा। उत्साहपूर्वक बोला—"अपने दरबार के सिपाही लोटासिंह ने आकर कहा—सरकार! गरीब महरा हल चलाने के लिए तैयार ही नहीं होता। कहता है, तीन दिन बेगार में बीत गये। तीन दिनों से दो-दो 'सुथनी' खाकर प्राण बचाये जा रहे हैं; और अब तो काबू नहीं जो हल चलावें।' यह सुनते ही गरीबपरवर की आँखों में खून उतर आया और आपने फौरन हुक्म दिया—'उसकी झोंपड़ी उजड़वा कर फेंकवा दो और उस जमीन पर हल चलवा कर आलू रोपवा दो'।"

"सच है। वह कमीना बहाना कर रहा था।"

"और सरकार" टुनटुनवा ने कहा—"किस प्रकार दौड़कर लोटासिंह और सात धाँगड़ों के साथ हमने आपके हुक्म का पालन किया था!"

"आखिर तू मेरा मुँहलगा सेवक है। तेरे शरीर में, मेरा नमक कितना भींगा है!" मूरतसिंह उसके सर अहसान लाद बैठे।

"सरकार का गुलाम हूँ मैं।" टुनटुनवा ने आवेश में अपने स्वामी के चरणों पर माथा रख दिया। भरे गले से बोला—"सरकार! मैं तो भगवान से यही विनय करता हूँ—जब-जब मैं धरती पर अवतार लूँ तब-तब आपकी खिदमत में ही मेरा जीवन गुजरे और सरकार के पाँव दबाते-दबाते ही मेरा दम निकले।"

बाबू मूरतसिंह ने उसकी बातों पर कान नहीं दिया। उनका ध्यान किसी दूसरी ओर लगा था।

"टुनटुनवा!" मूरतसिंह ने मौन तोड़ा।

"जी सरकार !" टुनटुनवा ने कान खोल दिये। अपने प्रभु की आकृति देखते ही वह समझ गया कि कोई नया गुल खिलने वाला है :

"मोटरा को तू जानता है न ?" मूरतसिंह की दबी आवाज़ थी।

"भला उसे क्यों न जानूँगा ! यहीं मेरा जनम-करम और यहीं मेरे बाल खिचड़ी बने।" टुनटुनवा ने कहा—"वह लोटासिंह का चेला है, सरकार !"

"हाँ लोटासिंह उसे कुश्ती लड़ाया करता है।" मूरतसिंह बोल उठे—"उसकी औरत को तू ने देखा ही होगा ?"

"देखने की कहते हैं सरकार...." टुनटुनवा मुस्करा पड़ा। बोला—"गुस्ताखी माफ हो जाय तो दिल की बात उगल दूँ।"

"कहो न !"

"नहीं, पहले माफी मिल जाय।"

"जाओ, माफ किया।"

टुनटुनवा बगलें झाँकने लगा।

"अब मुँह क्यों नहीं खोलता बे ? मुँह में क्या दही जम गया ?"

"लाज लगती है सरकार।"

"हिजड़ा कहीं का ! मरद होकर लजाता है ?"

"सरकार ! लाज की बात ही है।"

"तो मुझसे परदा कैसा ?"

"सरकार ! वह रात में मुझसे बगीचे में मिला करती थी।"

"तुझसे ?" बाबू मूरतसिंह की आँखें खुल गईं।

"जी हाँ, धर्मावतार ! मेरे बगैर उसे चैन नहीं मिलता था।" टुनटुनवा ने कहा—"हम लैला-मजनू की नौटंकी खेलते थे...."

"अब वह तुझसे नहीं मिलती ?" मूरतसिंह की उत्सुकता बढ़ गई।

"नहीं सरकार।" टुनटुनवा ने लम्बी साँस ली। बोला—"औरत का कोई विश्वास नहीं। नाम तो उसका 'इलाइचिया' है

मगर जहर की पुड़िया है। पहले मुझ पर मरती थी और अब लोटा सिंह पर जान देती है।"

"ऐं!" बाबू मूरतसिंह की आँखें विस्मय से फटी की फटी रह गईं। क्षण भर बाद वे सँभल कर बोले—"लोटासिंह तो महँगू की बेटी 'भकजोगनी' से फँसा था। उससे खटपट हो गई क्या?"

"सरकार!...." टुनटुनवा बोल उठा—"लोटासिंह की बात मत पूछिए। वह तो कुकुर की तरह घर-घर हाँड़ी में मुँह लगाते फिरते हैं। गाँव की शायद ही कोई बहू-बेटी उनसे बची होगी। जिस पर उनकी नजर गड़ जाय उसका सत भगवान ही बचायें तो बचे। वह तो किशन-कन्हैया बन कर रास रचाते रहते हैं। आपके भय से लोग सर नहीं उठाते और सब के मुँह पर ताला लगा रहता है।"

"वह तो गुरूघंटाल निकला।"

"जी हाँ धर्मावतार। गुरू तो गुड़ ही रहे और चेला चीनी हो गया।"

"कहाँ है लोटासिंह?" मूरतसिंह ताव में आ गये।

"सरकार, इस समय तो वह अखाड़े में ताल ठोंककर कुश्ती के दाँव दिखा रहे होंगे या भैंसे की तरह पड़े होंगे और चेले देह का दर्द दूर करते होंगे।"

"उसके लौटते ही मुझे खबर करना।" मूरतसिंह का स्वर गंभीर हो गया।

"जो हुक्म देवता।"

"अरे!" बाबू मूरतसिंह चौंक पड़े। आँखें नीली-पीली करते हुए बोले—"गाँजा नहीं तैयार किया? जुग बीत गया। हरामजादे!...."

"सरकार!" टुनटुनवा के होश उड़ गये। भय से व्याकुल स्वर में बोल उठा—"भला उससे भी गाफिल होऊँगा! अभी चिलम बढ़ाता हूँ।"

और वह जल्दी-जल्दी गाँजा मलने लगा।

●

शेरमार खाँ

बाबू मूरतसिंह धुएँ का गुबार उड़ा रहे थे तभी एक मोटे-मुसटण्डे जवान ने कमरे में प्रवेश किया। उसका नाम है शेरमार खाँ।

"आदाब, सरकार!"

"आदाब, आदाब। आओ, बैठो।"

शेरमार खाँ, मूरतसिंह के पास ही चौकी पर बैठ गया। अपना झोला बगल में सँभाल कर रखा।

वह अपने इलाके में भूत की तरह प्रसिद्ध है। लड़ने के लिये उसकी हड्डियाँ फड़फड़ाती रहती हैं। झगड़ा खोज-खोज खरीदता है। डाके में बहुत मन लगाता है।

शेरमार खाँ को टुनटुनवा की उपस्थिति खटक रही है—यह मूरत सिंह ताड़ गये। झट उन्होंने टुनटुनवा को हुक्म सुनाया—

"टुनटुनवा! जा, भूखली को पकड़ ला!"

"जो हुक्म दीनानाथ!"—टुनटुनवा उठा और शेरमार खाँ पर गहरी नजर डालता चल पड़ा।

अब एकांत था। शेरमार खाँ थे और बाबू मूरतसिंह! चोर-चोर मौसेरे भाई। ठठेरे-ठठेरे बदलौअल होने वाला था।

शेरमार खाँ ने झोले से एक बन्दूक निकाली। बन्दूक दो भागों में विभक्त थी। उसे मूरतसिंह के सामने रखते हुए शेरमार खाँ ने कहा—"सरकार! अपनी चीज देख ली जाय। इसे जल्द ही छिपा देना बेहतर होगा। कोई टपक न पड़े!"

"हैं....हैं....हैं....हैं...." बाबू मूरतसिंह हँस पड़े। हँसते हुए बोले—"शेरमार खाँ! तुम तो फूँक-फूँक कर कदम रखते हो। तुम्हारे जैसे

बहादुर के लिये यह शोभा नहीं देता। क्या मेरे पास बन्दूक का लाइसेंस नहीं है?"

"मगर यह बन्दूक तो चोरी की है...."

"यही क्यों? मेरे पास ऐसी तीन बन्दूकें हैं। दो पिस्तौलें भी हैं।"

"यह तो मुझे मालूम है सरकार!"

"फिर डरते क्यों हो?"

"सरकार! रातवाली डकैती में एक पकड़ा गया है।"—शेरमार खाँ के मुँह से उच्छ्वास निकल पड़ा। उसने दुःख प्रकट करते हुए कहा—"साले ने भेद खोल दिया है।"

"ऐं!" बाबू मूरतसिंह के पाँव से साँप लिपट गया। उछल पड़े। पूछ बैठे—"उसने मेरा नाम तो नहीं लिया?"

"नहीं सरकार!" शेरमार खाँ ने ढाढ़स देते हुए कहा—"मेरे सिवा यह किसी को मालूम नहीं कि असल में डाकुओं के सरदार आप ही हैं। सभी उल्लू के पट्ठे अपना सरदार मुझे ही मानते हैं।"

"शाबाश! तुम बड़े ही अक्लमंद हो।" मूरतसिंह ने कहा—"तुम्हारी अक्लमंदी के कारण ही तो मैंने अपना भार तुम्हारे मजबूत कंधों पर डाल दिया।"

"आपके लिये जान हथेली पर लिये फिरता हूँ।"

"तुम्हारी वफादारी में शुबहा की गुंजाइश नहीं।"

"आपका इशारा मिले तो पानी में आग लगा दूँ।"

"बेशक! लेकिन....लखना और मखना तो मुझे जानते हैं। कई बार डकैती में मेरा साथ दे चुके हैं।"

"उनसे डरने की जरूरत नहीं सरकार।" शेरमार खाँ ने कहा—"वे दोनों अपने दाहिने हाथ हैं। वे जिन्दा ही आग की लपटों में झोंक दिये जायँ, तब भी मुँह बन्द ही रखेंगे।"

"बेशक। वे दोनों वीर कहे जा सकते हैं।"

"उनका जोड़ नहीं सरकार।" शेरमार खाँ बोल उठे—"उन्हें सौ-दो सौ लोग घेर लें फिर भी वे बच निकलेंगे, ऐसे कैंड़े के हैं!"

"उनका क्या कहना! वे दोनों नामी लठैत हैं।"

"अफसोस इसलिये है कि उनके नाम वारंट जारी है और वे छुक-छिप कर जीवन गुजारते हैं।"

"हाँ, रात वाली डकैती में वे शामिल नहीं थे क्या?"

"सरकार! उनके बगैर मैं किसी डकैती के लिए कदम नहीं उठाता।"

"तब अपना एक आदमी क्यों पकड़ा गया?"

"गरीबनवाज! गाँव वालों ने हमें घेर लिया था। वे माटे की तरह हम पर टूट पड़े थे।" शेरमार खाँ ने कहा—"हम लाठी चलाते भागे फिर भी पीछा करने वालों ने पीछा न छोड़ा। मैंने बन्दूक सँभाली और लगातार पाँच फायर किये। उसका फल हमारे हक में अच्छा निकला। लोगों की भीड़ बादल की तरह फट गई। हम खतरे से दूर निकल गये। कुछ देर बाद पता चला, साला भगेलुआ गाँव में ही रह गया।"

"उसकी खोज नहीं की?"

"उसकी खोज कैसे करता? गाँव में लौटना आग में कूदने के बराबर था।" शेरमार खाँ बोल उठे—" अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी कैसे मारता? उसे उसकी किस्मत के भरोसे ही छोड़ दिया।"

"मगर भगेलुआ पकड़ा कैसे गया?"

"सुबह मैंने अपना एक जासूस भेजा था" शेरमार खाँ ने कहा—"पता लगा, भगेलुआ कुएँ में गिर पड़ा था। सुबह में गाँव वालों ने उसे कुएँ से निकाला। दारोगा पहुँचा। और जब भगेलुआ की मरम्मत होने लगी, उसने पेट की बात उगल दी।"

"वह सुअर का बच्चा बड़ा हरामी निकला।" बाबू मूरतसिंह क्रोध

और घृणा से मुँह सिकोड़ कर बोल उठे—"भेद छिपाये रखने के लिये अपनी नन्हीं-सी जान भी कुर्बान न कर सका।"

"मैं क्या जानता था कि इतने दिनों से मैं आस्तीन में साँप पाल रहा हूँ।" शेरमार खाँ के मुख पर चिंता की घटाएँ छा गईं।

"अब से ऐसे अधकचरे को अपने दल में मत रखियेगा।" बाबू मूरतसिंह के स्वर में चेतावनी थी।

"सरकार! ऐसी गलती दुहराई नहीं जाती। ठोकर लगने पर ही होश आता है। दूध का जला मठा भी फूँक-फूँक कर पीता है।" शेरमार खाँ की वाणी पश्चात्ताप में डूबी हुई थी।

"पूज्य पिताजी ने सैकड़ों डाके डाले। मैंने भी अनेक डकैतियाँ कीं, मगर कभी बाल भी बाँका न हुआ।" मूरतसिंह ने गर्व से मूँछों पर हाथ फेरा।

"मेरे भी पाँव कभी फिसले न थे सरकार। भगेलुआ हरामी के पिल्ले ने मेरी नाक कटवा दी।" शेरमार खाँ का मुँह लटक गया।

"छोड़िये उसकी चिंता। टुनटुनवा आना ही चाहता है। मेरा हिस्सा झट दे दीजिए।" मूरतसिंह गंभीर हो उठे।

"रात वाली डकैती बेफायदा साबित हुई सरकार।" शेरमार खाँ ने मुँह बनाकर कहा—"खोदा पहाड़ निकली चुहिया। कुल पाँच हजार का सामान हाथ लगा है।"

"पर मैंने तो सुना है, पचास हजार के गहने और नोट लुटे हैं, मूस राम की तिजोरी से।"

"सरकार! कहने वाला जरूर झूठों का सरदार होगा।" शेरमार खाँ तुनक पड़ा। बोला—"आपसे भला क्या छिपा है! जिसके घर से सौ रुपये का माल चोरी जाता है, वह हजार रुपये का ढिंढोरा पिटवाता है।"

"मुझे आप पर विश्वास है। खैर लाइये, तीन हजार।"

"तीन हजार ?" शेरमार खाँ चौंक उठा। बोला—"सरकार! पाँच हजार का चौथाई हिस्सा 'तीन हजार' नहीं होता। एक बार फिर हिसाब जोड़ने की तकलीफ उठायें।"

"खाँ साहब!" बाबू मूरतसिंह की भृकुटी टेढ़ी हो गई। बोले—"आप मुझे 'लिख लोढ़ा, पढ़ पत्थर' समझते हैं क्या ?"

"वाह धर्मावतार! यह मैंने कब कहा ? आप तो उस्तादों के भी उस्ताद हैं।" शेरमार खाँ ने दबी आवाज में कहा—"मगर अब तक तो आप चौथाई ही लेते आये हैं।"

"पहले का मामला आज की तरह संगीन नहीं था।" मूरतसिंह ने तेवर बदल कर कहा—"भगेलुआ न जाने पुलिस से क्या-क्या बकेगा और न जाने हमें किन मुसीबतों के बीच गुजरना पड़ेगा।"

"आप पर शुबहा कौन करेगा ?" शेरमार खाँ बोल उठा—"अफसरों की जान-पहचान किस दिन काम आयेगी ?"

"दिमाग मत खाइये। मुझे बहस से चिढ़ है।" मूरतसिंह उबल पड़े—"मैं तीन हजार से कम न लूँगा। आप फिर चीं चपड़ करेंगे तो धेला भी लेने की सौगन्ध खा लूँगा। तब आप जानें और आपका काम। पुलिस से निपटते रहियेगा। सिफारिश के नाम पर मैं मुँह सी लूँगा।"

शेरमार खाँ ने जेब से नोटों का बंडल निकाल मूरतसिंह के आगे रखते हुए कहा—"शर्त्त के मोताबिक सवा हजार ही लेकर घर से चला था...."

"फिर वही तोते की रट!" मूरतसिंह ने आँखें नीली-पीली कीं। बोले—"एकबार कह दिया, तीन हजार से कम न लूँगा।"

"धर्मावतार!"

"फिर धर्मावतार ?"

"सुनिये तो!"

"मैं एक न सुनूँगा।"

"तीन हजार ही सही।" शेरमार खाँ ने कहा—"बाकी रुपये कल मिल जायेंगे।"

"नहीं, रुपये मुझे आज ही मिल जायँ।" मूरतसिंह ने आँखें तरेरते हुए कहा—"इस मामले में लल्लो-चप्पो मुझे एकदम पसन्द नहीं। खरी मजूरी चोखा काम।"

"ऐसा ही होगा सरकार।"

"धर्मावतार !...."टुनटुनवा ने कमरे में प्रवेश किया।

बाबू मूरतसिंह उस समय तक बन्दूक और नोटों का बण्डल तोशक के नीचे दबा चुके थे। वे टुनटुनवा की ओर मुखातिब हुए। पूछ बैठे—"भूखला से भेंट हुई रे ?"

"उसे पकड़ लाया हूँ गरीबपरवर।" टुनटुनवा ने विजय के गर्व से अपना माथा उठाया। मूँछों पर हाथ भी फेरा।

"हाजिर करो उसे।" मूरतसिंह ने हुक्म सुनाया।

"अभी लाया सरकार !" टुनटुनवा कमरे से बाहर निकल गया। मूरतसिंह ने शेरमार खाँ की आँखों में रहस्यपूर्ण दृष्टि डाली। खाँ उनके मन का भाव ताड़ गया। वह उठ खड़ा हुआ। पूछ बैठा—"सरकार, इजाजत देते तो बन्दा रुखसत होता।"

"जाइए न ! मगर शाम तक रुपये...."

"जरूर। मेरा लड़का दे जायगा।"

"नहीं, आपको ही आना पड़ेगा !"

"कोई हर्ज नहीं, मैं खुद खिदमत में हाजिर हो जाऊँगा।"

और 'आदाब' कहकर खाँ चल पड़ा। दो कदम बढ़कर रुका।

"सरकार ! मेहरबानी रखियेगा।"

"ओह ! आप बेफिक्र रहें खाँ साहब ! आँच न लगने पायेगी।" टुनटुनवा के आ जाने से वे चुप हो गये।

खाँ ने भी ढुनढुनवा और भूखला की उपस्थिति में जुबान हिलाना मुनासिब नहीं समझा। वह मुँह लटकाये धीरे-धीरे कमरे से बाहर हो गया।

"बैठ रे भूखला !"

बाबू मूरतसिंह के मुँह से उपर्युक्त मधुर और कृपापूर्ण स्वर निकलने के पूर्व ही भूखला जमीन पर, अपनी नाक रख चुका था। उसने सर उठा कर, बड़े ही दीन भाव से कहा—

"सलाम मालिक।"

मूरतसिंह ने उसके सलाम का कोई जवाब नहीं दिया। हाँ, उन्होंने अपनी मुस्कुराहट से भूखला का कलेजा दहला दिया। बोले—

"मुझसे नाराज हो क्या ?"

"हरे राम !" भूखला ने दाँत तले उँगली दबा ली। बोला— "किसने आपके कान भर दिये ? मैं भला अपने मालिक से नाराज होऊँगा ! मालिक और राजा तो ईश्वर के बराबर होता है। ईश्वर से नाराज होकर कोई अपना परलोक बिगाड़ेगा ?...."

"सरकार !" ढुनढुनवा बोल उठा—"भूखला बड़ा ज्ञानी है। धर्म की लकीर से तनिक भी इधर-उधर नहीं चलता। गाँव में इसके जैसा हुजूर का खैरख्वाह भी कोई नहीं।"

"खैरख्वाही के कारण ही तो मैंने दो बीघे जमीन इसे जोतने के लिए दी है।" मूरतसिंह ने कहा—"गाँव के अनेक भलेमानसों ने मेरे आगे नाक रगड़ी—सरकार, भूखला को सजा दें ! वह रात में अपनी भैंस से खेत चराया करता है; वह चोरी-चोरी खेतों से खड़ी फसल काट लेता है; वह डाकेजनी करता है; वह 'यह' करता है—तो वह 'वह' करता है, मगर मैंने उनकी गिड़गिड़ाहट पर कान नहीं दिया। हाँ, मैंने उन्हें चेतावनी जरूर दे दी—वे फिर कभी वैसी शिकायत लेकर मेरे पास न पहुँचे।"

"भूखला !" ढुनढुनवा ने कहा—"इतना ही नहीं, धर्मावतार ने

लोगों को खबरदार कर दिया है कि जो कोई भूखला के खिलाफ जुबान हिलायेगा उसकी जुबान राख लगा कर खींचवा ली जायगी।"

"भला इसमें कोई झूठ है!" बाबू मूरतसिंह बोले—"भूखला के लिए तो मेरी ओर से सात खून माफ है।"

भूखला ने दाँत निपोर दिये। बोला—"सरकार माई-बाप हैं!"

"भूखला!...." मूरतसिंह ने मुँह खोला।

"जी सरकार।"

भूखला का हृदय धड़कने लगा।

"तेरी औरत बीमार है क्या?"

"नहीं सरकार।" औरत की चर्चा से भूखला की नसों में गरमी आ गई। उसने अपनी आत्मा और मन के उफान को दबोचते हुए कहा—"वह तो भली-चंगी है मालिक।"

"बड़ी नेक औरत है।"

"सरकार!" इसबार ढुनढुनवा ने मुँह खोला—"वह औरत नहीं गाय है। नाम है कबूतरी और गुण भी कबूतर की ही तरह।"

"ढुनढुनवा, उसे देखकर मैं अपनी स्वर्गवासिनी पत्नी का शोक भूल जाता हूँ।" मूरतसिंह बोल उठे—"सूरत तो बबुआ की माँ से मिलती ही है बोली भी वैसी ही मीठी है मानो कोयल कूकती हो...."

"सवा सोलह आने सच है, सरकार!" ढुनढुनवा ने हुँकारी भरी।

"रात तो मुझे खाना अच्छा नहीं लगा।" मूरतसिंह ने लम्बी सांस ली। बोले—"उसके ध्यान में ही डूबा रह गया। सोच रहा था, उसने किसी रोग के चंगुल में फँसकर, चारपाई तो नहीं पकड़ ली?"

"यह झूठ नहीं है भूखला।" ढुनढुनवा ने कहा—"रात भर सरकार करवटें ही बदलते रहे। मेरा अन्दाज था, सरकार को मेरी तरह ही मच्छड़ और खटमल तंग कर रहे थे...."

"राह देखते-देखते ही सुबह हो गई।" मूरतसिंह बोले—"पल भर

के लिये भी पलकें नहीं झपकीं। मुझे कबूतरी की चिंता में न इस करवट चैन मिलता था और न उस करवट।"

"चः चः चः" टुनटुनवा ने दुःख और क्रोध प्रकट करते हुए कहा—"अरे साले भूखला! तेरी जवानी माटी में मिल जाय। तू मेरे सरकार को इतना कष्ट देता है!"

"मेरा क्या कसूर है चाचा!" भूखला तुनक उठा—"तुम तो नाहक मुँह खराब करते हो।"

"पटक कर छाती पर चढ़ बैठूँगा हरामजादे! मुझे समझता क्या है!" टुनटुनवा गरज उठा—"औरत को दरबार में आने से रोक दिया और गाल बजाता है। चोरी और सीनाजोरी!"

"चाचा! तुम्हारा ईमान तो खटाई में पड़ ही गया है। कुछ भगवान का भी खौफ खाओ।" भूखला के अन्तर का क्रोध फूट पड़ा। बोला—"तुम्हें भला क्या मालूम कि गाँव वाले किस तरह अँगूठा नचा रहे हैं! राह चलते मेरी ओर उँगलियाँ उठाई जाती हैं।"

"तू उल्लू का पठा है।" टुनटुनवा बोल उठा—"उँगली उठाने वालों की पगड़ियाँ क्यों नहीं उछालता? ईंट का जवाब पत्थर से क्यों नहीं देता? क्या तुझे मालूम नहीं, सरकार या सरकार के मुलाजिमों से किसी कुलवन्ती का आँचल अछूता है?...."

"तुम सच कहते हो चाचा, मगर...."कहते-कहते भूखला चुप हो गया।

"मगर क्या?" मूरतसिंह पूछ बैठे।

"सरकार, मुझे अब बखश दें!"

भूखला, बाबू मूरतसिंह के पाँवों पर गिर पड़ा।

"अरे, यह क्या?" मूरतसिंह पाँव हटाते हुए बोले—"तू ने कौन-सा कसूर किया है रे मूरख?...."

"सरकार अपनी शादी कर लें!" भूखला गिड़गिड़ा उठा।

"वाह रे भूखला, वाह! सर के सारे बाल सुफेद हो गये और

पालकी पर बैठकर ब्याह रचाने जाऊँ?" मूरतसिंह मुस्कुरा उठे। बोले—"लोग मुझे क्या कहेंगे रे?"

"लोग आपके चरणों की धूल माथे पर लगायेंगे।"

"देख भतीजे, ज्यादा उपदेश मत सुना।" टुनटुनवा बोल उठा—"दो टूक बात कर। साफ-साफ बता, अपनी जोरू को सरकारी खिद्-मत में आने देगा या नहीं?"

"चाचा, सरकार को समझा दो और मेरी छाती पर मूँग मत दलो।"—भूखला रो पड़ा। बोला—"गाँव में और भी तो औरतें हैं?"

"मगर मन सबसे नहीं मिलता। क्यों बेटे?...." टुनटुनवा ने शब्दों के भाले भूखला की छाती में मारे।

भूखला तिलमिला उठा। उसके मुँह से निकला—"चाचा!"

और बाबू मूरतसिंह दाँत कटकटाते हुए उठ पड़े।

"लात के देवता बात से नहीं मानते।"—उन्होंने भूखला के सिर पर जूता बरसाते हुए बीस तक की संख्या गिन दी।

"धन्य हैं सरकार।" टुनटुनवा ने कहा—"एक और जमाइये! सच है, सीधी उँगली घी नहीं निकलता।"

अंगारों पर लोटते हुए बाबू मूरतसिंह ने भूखला की पीठ पर एक लात मारी। बोले—"कुत्ते! मेरी आँखों के सामने से दूर हो जा!"

भूखला भींगी बिल्ली की तरह कमरे से बाहर निकल गया।

मूरतसिंह ने फुसफुसाकर, कहा—"टुनटुनवा!"

"जी सरकार!" टुनटुनवा उनके और निकट खिसक गया।

"बेईमान को कल ही जेल भिजवा दो! मैदान साफ करने के लिये यह बहुत जरूरी है।"

"सरकार ने मेरे मुँह की बात छीन ली।" टुनटुनवा ने आवेश में कहा—"देखिएगा, कल कैसा गुल खिलाऊँगा?"

●

खेत खाय गदहा, मार खाय जोलहा

दूसरे दिन की सुहानी सुबह। बाबू मूरतसिंह हलुए पर हाथ फेर रहे थे।

ढुनढुनवा घबड़ाया हुआ आया। बोला—"सरकार! दरोगाजी की सवारी इधर ही आ रही है।"

मुँह में हलुए का कौर डालते हुए मूरतसिंह ने कहा—"कोई परवाह नहीं। तू लोटासिंह से मेरा हुक्म सुना दे, कहीं से एक खसी पकड़ लावे। पुलाव बनेगा।"

"जो हुक्म धर्मावतार।" ढुनढुनवा तेजी से लौट पड़ा।

हलुआ साफ करने के बाद मूरतसिंह ने दूध से भरा लोटा खाली किया। हाथ-मुँह धोकर जैसे ही बाहर निकले, थानेदार घोड़े पर सवार, उनके दरवाजे पर आ पहुँचा।

"आदाब हुजूर!" थानेदार ने हाथ उठाकर सलाम किया।

"आदाब, जनाब। कैसे भूल पड़े? आइए, तशरीफ लाइए और अपना स्वागत करने का मौका दीजिए।" मूरतसिंह फूले न समा रहे थे।

"हुजूर, डकैतों के मारे नाकों दम है। कल की रात भी एक डाका पड़ा। आपको तो मालूम ही होगा?" दारोगा घोड़े से उतर पड़ा।

"भला मालूम क्यों न होगा? मूसराम मेरा जिगरी दोस्त है।"—मूरतसिंह ने कहा—"जब से डाके की खबर मिली है, अन्न जहर की तरह लगता है...आइए, कमरे में तशरीफ रखिए।"

मूरतसिंह ने उस सुसज्जित कमरे का ताला खोला जिसमें वे हाकिम और नेताओं का स्वागत किया करते थे।

दारोगा कमरे में घुसा और मूरतसिंह के एक हलवाहे ने उसका घोड़ा खूँटे से बाँध दिया।

"सुना है, कोई डकैत पकड़ा गया है!" मूरतसिंह पूछ बैठे।

"हाँ, एक डकैत पकड़ा गया है।" दारोगा ने कहा—"वह भागते समय एक कुएँ में गिर पड़ा, नहीं तो कहाँ हाथ आता।"

"कोई ग्रामीण भी घायल हुआ है?"

"घायल?" दारोगा आवेश में भर गया। बोला—"दो आदमी जान से हाथ धो चुके हैं। पाँच-सात घायल होकर अस्पताल में पड़े हैं।"

"हे भगवान्, हमारी रक्षा तू ही करना!" सहमने का अभिनय करते हुए बाबू मूरतसिंह ने आकाश की ओर हाथ उठा दिये। काँपती आवाज में बोले—"इस्लाम साहिब, अब जमींदार-साहूकारों की जान के भगवान ही रक्षक हैं। पुलिस लाख प्रयत्न करती है कि डाका न पड़े, मगर उसकी नाक के नीचे डकैत अपना काम बना ही लेते हैं। चोरी के बारे में तो मुँह खोलना ही बेकार है। ऐसा लगता है, चोरों को चोरी करने के लिए छूट मिल गई है। इस थाने के एम० एल० ए० एसेम्बली में प्रश्न उठानेवाले हैं। हाल में ही मुझे उनका पत्र मिला है...."

"हुजूर, जनता पुलिस का साथ नहीं देती तो वह क्या करे? पुलिस नहीं चाहती कि उसकी बदनामी हो।" दारोगा रूमाल से मुँह पोंछने लगे।

"जनता कैसे साथ दे इस्लाम साहिब? उसे क्या अपनी जान भारी पड़ी है? डकैतों के खिलाफ सर उठाने से उनकी सुरक्षा की गारण्टी कौन लेगा?"

"यही तो कमजोरी है, जो डकैतों के हौसले बढ़ा रही है।"

"ठीक है। मैं पुलिस का साथ देने के लिए तैयार हूँ। समझ लीजिए, आज से ही कमर कसकर, मैदान में कूद पड़ा।"

मूरतसिंह का उत्साह देखने योग्य था।

"बहुत खूब। अब मुझे विश्वास हो गया, मैं डकैत और चोरों को बड़े घर की हवा खिला सकूँगा।" दारोगा इस्लाम हुसेन मुस्कुरा पड़े।

"टुनटुनवा!" मूरतसिंह चिल्ला उठे।

"धर्मावतार।" टुनटुनवा हाँफता हुआ आ पहुँचा।

"खसी मिला?" मूरतसिंह पूछ बैठे।

"मिला हुजूर।" टुनटुनवा बोला—"लोटासिंह उसे नसरल्ली मियाँ से जबह करवा रहे हैं।"

"तो खड़े-खड़े मुँह मत निहार। उसकी कुल कलेजियाँ घी में अच्छी तरह भुनवा ले और फौरन् से पेश्तर दारोगा जी के सामने हाजिर कर।"

"जो हुक्म गरीबपरवर।" टुनटुनवा तेजी से लौट पड़ा।

"शेरमार खाँ के बारे में आपका कैसा ख्याल है?"

दारोगा इस्लाम हुसेन ने प्रश्नभरी दृष्टि मूरतसिंह के मुख पर डाली।

"किसका नाम लिया आपने?"

मूरतसिंह ने अपने उछलते दिल को सँभाला।

"भरोलुआ ने बतलाया है, शेरमार खाँ डकैतों के सरदार हैं।"

और दारोगा का वाक्य समाप्त होते-होते मूरतसिंह ठठाकर हँस पड़े। बोले—

"बड़ी मजेदार बात है। मजा आ गया।"

"क्यों, आप हँस क्यों पड़े?" दारोगा अचरज में डूब गये।

"आपने तबियत खुश कर दी।"

"बात क्या है ?"

"भगेलुआ की मरम्मत नहीं हुई, इसी से यह बात है।" मूरतसिंह गम्भीर हो गये। बोले—"उसकी खाल उधेड़कर, नमक छिड़किये। हो सकता है तब वह पेट की बात उगल दे।"

"उसकी तो ऐसी मरम्मत हुई है कि वह जनम भर याद करेगा।" इस्लाम हुसेन बोल उठे—"तो आपका विश्वास है, उसने जो कुछ कहा है, झूठ है ?"

"झूठ और सफेद झूठ।" मूरतसिंह आवेश में बोल उठे—"साले ने चाँद पर थूका है। शेरमार खाँ पर इलजाम लगानेवाले को कोढ़ फूटेगा। मरने के समय उसे कोई पानी देनेवाला भी न मिलेगा...."

"ऐसी क्या बात है उसमें ?"

"इस्लाम बाबू! वह खुदा का सच्चा भक्त है।" मूरतसिंह ने कहा—"वैसा मजहब का पाबन्द मुसलमान इस इलाके में एक भी नहीं। वह पाँचो वक्त नमाज पढ़ता है। तसबीह बराबर घुमाता रहता है। एक भी रोजा नहीं छोड़ता। खैरात खुले दिल से करता है। मैं तो भगवान से यही विनय करता हूँ, हे भगवान, शेरमार खाँ की तरह तरह अपनी भक्ति तू सबके दिल में दे...."

"मुझे तो उस पर शक है बाबू मूरतसिंह।" दारोगा इस्लाम हुसेन बोल उठे—"अधिक भक्ति चोर का लक्षण। थाने में तो उसके खिलाफ पन्ने पर पन्ने भरे पड़े हैं।"

"अगर यह सच है तो उसके साथ सरासर जुल्म किया गया है। खैर, मुझे उससे क्या मतलब!" मूरतसिंह ने कहा—"उसके एक रिश्तेमन्द एम॰ एल॰ ए॰ हैं। सुना है, दो वकील उसके फुफेरे भाई हैं...."

"उससे क्या हुआ ?"

"कांग्रेस का बड़ा ही भक्त है। गत चुनाव में उसने आसमान, जमीन एक कर दिया। कांग्रेसी उम्मीदवार के जीतने की कोई आशा न थी। विरोधी उम्मीदवार जीत कर रहता, मगर उसने पासा ही पलट दिया।"

"इससे वह डाका डालता फिरेगा?" इस्लाम हुसेन ने तेवर बदल-कर कहा—"टट्टी की ओट में शिकार खेलेगा?...."

"यह आप कहें इस्लाम बाबू! मैं उसे डाकू कहने के लिए हर-गिज तैयार नहीं। मैं तो उसे जनता का सेवक मानता हूँ।"

"क्या दस-बीस डकैत उसके साथ नहीं रहते? क्या वह झगड़ा मोल नहीं लेता? क्या दंगा-फसाद उसे पसन्द नहीं?...."

"डकैत नहीं, लठैत कहिये दारोगाजी!" बाबू मूरतसिंह, दारोगा को गुस्से में देख मुस्कुराहट के फूल बरसाने का निश्चय कर बैठे।

मुस्कुराते हुए ही बोले—"देहात में, जहाँ डकैतों के मारे नाक में दम है, कोई बड़ा आदमी दस-बीस लठैत साथ न रखे तो उसके जान-धन की हिफाजत कैसे होगी? हाँ, यह बात जरूर है—शेरमार खाँ किसी की नीली-पीली आँखें सह नहीं सकता। वह नाक पर मक्खी नहीं बैठने देता। ईंट का जवाब पत्थर से देता है। किसी ने उसके खिलाफ सर उठाया तो वह जान पर खेल जाता है...."

तभी ठुनठुनवा ने तश्तरी में भुनी हुई कलेजियाँ और पानी से भरा ग्लास लिये कमरे में प्रवेश किया।

"अब तक चखें इस्लाम बाबू!" मूरतसिंह स्नेहसिक्त स्वर में बोले—"पुलाव भी शीघ्र ही तैयार हो जाता है।"

इस्लाम हुसेन ने ठुनठुनवा से तश्तरी ले ली और कलेजी का एक टुकड़ा मुँह में डालते हुए कहा—"लखना और मखना की खोज में निकला था...."

"ठीक है; पुलाव खाकर जाइएगा।" मूरतसिंह ने लापरवाही से कहा—"मेरा रसोइया रामायण चौबे पुलाव लाजवाब बनाता है...."

"अच्छा, एक बात बताइयेगा ?"

"सौ बात बताऊँगा।"

और मूरतसिंह, ढुनढुनवा पर बरस पड़े—"गधा कहीं का! तू यहाँ क्यों खड़ा है? जा, रामायण चौबे की मदद कर!"

ढुनढुनवा अपना-सा मुँह लिये कमरे से बाहर निकल गया।

"लखना और मखना के बारे में आपको मालूम है?" दारोगा पूछ बैठे।

मूरतसिंह के कान खड़े हुए। जिन पर वर्षों से डकैती के सिलसिले में वारंट है और जो फरार जीवन गुजार रहे हैं, उनकी ओर से सफाई देना, आँखों में धूल झोंकना या गाल बजाने के बराबर है।

"इस्लाम बाबू!"

"जी।"

"हाय बाप!" मूरतसिंह काँप उठे। बोले—"उन दोनों शैतान के बच्चों का नाम न लें। वे कंस और रावण के अवतार हैं। उनकी याद से ही जाड़ा-बुखार चढ़ जाता है। जैसे भी हो, उन्हें कालापानी भेजवा कर दम लीजिए।"

"अब कालेपानी की सजा नहीं होती, आजन्म कारावास का दंड मिलता है।" दारोगा ने कहा—"और वे तो खून के मुजरिम हैं। उन्हें तो फाँसी होगी।"

"वही सही। मगर आप उनकी ओर से गाफिल मत होइये।"

"अरे!" इस्लाम बाबू ने दाँत पीस कर कहा—"वे दोनों मिल जायँगे तो मैं पिस्तौल का निशाना बना दूँगा।"

"इसीलिये तो वे आपके सामने नहीं आते।"

मूरतसिंह मुस्कुरा पड़े। बोले—"मगर बकरे की माँ कब तक खैर मनायेगी!"

"धर्मावतार!" ठुनठुनवा ने आँधी की तरह कमरे में प्रवेश किया। विस्मय और भय से आतुर स्वर में बोला—"लोगों के दिल से डर एकदम निकल गया। न हाकिम का डर और न भगवान का खौफ। दारोगाजी मौजूद हैं फिर भी चोरी करने का दुस्साहस! राम रे राम, अब दुनिया उलट जायेगी।" उसने दाँतों तले उँगली दबा ली।

दारोगा इस्लाम हुसेन चौंक पड़े। मूरतसिंह उत्सुकता न दबा सके। पूछ बैठे—"बात क्या है ठुनठुनवा?"

"सरकार!"—ठुनठुनवा ने मुँह खोला—"भूखला दरबारी-खलिहान से एक धान का बोझा चुराये जा रहा था कि लोटासिंह ने उसे मौके पर पकड़ लिया।"

"कहाँ है वह?" मूरतसिंह के माथे पर बल पड़ गये।

"लोटासिंह उसे ला रहे हैं हजूर।" ठुनठुनवा बोल उठा।

"कौन है लोटासिंह?" दारोगा इस्लाम हुसेन ने पूछा।

"मेरा एक सिपाही इस्लाम बाबू।" मूरतसिंह ने कहा—"हरे राम! भूखला ने नाक में दम कर दिया है। अव्वल दर्जे का डकैत है, रात में अपनी भैंस से लोगों का खेत चरा दिया करता है। लखना और मखना का दोस्त है। चोर-चोर मौसेरे भाई। वे दोनों भूखला के घर में भी आकर रहते हैं।"

"तो अब तक आपने मुँह क्यों बन्द रखा?" दारोगा इस्लाम हुसेन उछल पड़े। बोले—"मैं साले की घरतलाशी करता।"

"इस्लाम बाबू, मैं मौके की तलाश में था।" मूरतसिंह ने कहा—"सोचा था, लखना और मखना को जब उसके घर में बेखबर पाऊँगा, आपको चुपके से बुला लूँगा। भनक मिलते ही वे रफूचक्कर हो जाते हैं। वे पूरे गुरुघंटाल हैं।"

भूखला आता दीख पड़ा। उसके 'सिर पर धान का बोझ' है। वह सिसक रहा है। उसके पीछे पहलवान लोटासिंह हैं। उनके हाथ में तीन हाथ का एक मोटा डंडा है।

भूखला ने बोझा रखकर, दारोगा के पाँव पकड़ लिये। गिड़-गिड़ा उठा—"दोहाई धर्मावतार, अब गोह के चंगुल में पड़े हुए गजराज को आप ही उबार सकते हैं।"

"गजराज का बच्चा!"—दारोगा ने उसे एक ठोकर लगाई। गरज उठे—"बता, लखना और मखना कहाँ हैं?"

भूखला काँप उठा। बोला—"सरकार, भला मैं उन्हें क्या जानूँ!"

पर दारोगा चाबुक से अपने मन का बुखार उतारने लगे थे।

"च्चः च्चः च्चः....अब छोड़ दीजिए बेचारे को। बड़ा ही गरीब है।" और मूरतसिंह ने दारोगा के कान के पास मुँह सटाकर कहा—"इसे छठी का दूध याद करा दीजिए। डकैती की रात यह अपने घर में नहीं था।"

टेढ़े पेड़ की छाया भी टेढ़ी

"कौन ? टुनटुनवा है क्या ?...."

"जी सरकार !"

"मर सरकार का बच्चा !" सूरतसिंह उबल पड़े—"राह देखते-देखते आँखें दुख गईं। कहीं अंडे से रहा था क्या ?"

"कसूर माफ हो सरकार। गुलाम किसी के आँसू पोंछ रहा था।"

"कबूतरी का क्या हुआ ?"

"वह मेरे साथ है हुजूर।" और पीछे की ओर मुड़ कर उसने कहा—"कबूतरी, खड़ी क्यों है ? आगे बढ़ और सरकार से माफी माँग। तेरे कारण सरकार ने कई रातें करवटें बदलते-बदलते काटी हैं।"

"आ जा कबूतरी।" सूरतसिंह ने नरम होकर कहा—"डर को दिल से हटा दे। मैंने तुझे माफ किया।"

"धन्य हैं सरकार।"—टुनटुनवा, सूरतसिंह की दयालुता पर मुग्ध हो गया। बोला—"ऐसा मालिक चिराग लेकर ढूँढ़ने पर भी नहीं मिलेगा।"

और तब वह कबूतरी की ओर मुखातिब हुआ। बोला—"तू धन्य है कबूतरी, जो बिना तपस्या के ही सरकार के दिल में जगह पा गई।"

कबूतरी को कमरे में जाने से हिचकिचाते देख, टुनटुनवा पर विस्मय का पहाड़ टूट पड़ा। उलाहना भरे स्वर में बोला—"आज तो तू इस तरह शरमा रही है जैसे सुहागरात की दुलहन...."

"टुनटुनवा साले ! उससे मजाक मत कर। वह खुद आ जायगी।"

"जो हुक्म धर्मावतार। अब आप जानें और आपका काम। मैं चला।"

टुनटुनवा बाहर जाने लगा।

"ठीक है। तू मेरे हुक्म की राह देख।" मूरतसिंह बोल उठे—"हाँ, भंडारी से कबूतर का माँस माँग ला।"

"जो हुक्म दयानिधान।" टुनटुनवा चला गया।

बाबू मूरतसिंह, कबूतरी की ओर बढ़े। उसकी कलाई पकड़ ली। खींचते हुए बोले—"आज तो तू शर्म के भार से झुकी जा रही है। और दिन तो गौरैये की तरह फुदकती-चहकती रहती थी।"

वह कबूतरी को अपने पलंग पर ले गये, जिस पर मोटा तोशक बिछा था। उसे अपने पास बैठाया।

कबूतरी ने तो जैसे ज़ुबान हिलाने की कसम खा ली हो। उसके गोरे, मगर उदास मुख पर दृष्टि पड़ते ही बाबू मूरतसिंह की नानी मर गई। बोल उठे—"खुशी कहाँ छोड़ आई पगली? यहाँ मरसिया पढ़ने के लिए तो मैंने बुलाया नहीं। तुझे तो आज होली मनानी चाहिए कि भूखला बड़े घर का मेहमान बन गया। अब हमारी राह में कोई रुकावट नहीं। हाँ, वह गीत तो सुना, जो तू बराबर गाया करती थी, 'सैंया मेरे कोतवाल, अब डर काहे का....' तू फिर भी चुप है। मुँह में दही जम गया है। अरे, तू तो इस प्रकार गुमसुम बैठी है जैसे खून के मुकदमे का फैसला सुनने आई है। मैं समझा। इसी तरह राधाजी भी कन्हैयाजी से मान किया करती थीं।" मूरतसिंह मुस्कुरा पड़े। बोले—"आ, मेरे पाँव तो दबा।"

वह लेट गये। कबूतरी के हाथ बढ़े इस तरह जैसे किसी मजार पर चिराग जलाना हो।....

बाबू मूरतसिंह प्रेमिका के स्पर्श से पुलकित हो उठे। पलकें बन्द हो गईं। प्रेम से भींगे स्वर में बोले—"प्यारी कबूतरी, तेरे बगैर रात मुझे काटने लगती है। गाँजे का दम लगाता हूँ, नेपाली दारू भी

पीता हूँ, मगर रंग फीका ही रहता है। सच कहता हूँ, तुझे देखते ही बे पिये नशा चढ़ जाता है।"

कबूतरी अपनी प्रशंसा से फूल उठी। उदासी को लात मार कर बोली—"सरकार की आवाज क्या छाती के भीतर से निकल रही है?"

"आवाज गले से निकलती है या छाती से? तू बड़ी भोली है।" मूरतसिंह हँस पड़े। क्षणभर बाद ही झुँझला उठे—"और जोर से पाँव दबा! लगता है, तुझमें दम ही नहीं। खाया नहीं क्या?"

टुनटुनवा ने दरवाजे के बाहर से खाँसा। मूरतसिंह ने कहा—"आ रे साले! वहाँ क्यों खड़ा है? तुझसे कैसा परदा?...."

टुनटुनवा ने कटोरे में मांस लिए कमरे में प्रवेश किया। बोला—"सरकार, कबूतरी के घर में आज चूल्हा नहीं जला। मरद के जेल जाने के गम में बेचारी दिन भर आँसू बहाती रही।"

"चुप नमकहराम।" मूरतसिंह ने आँखें तरेर कर कहा—"तू झूठों का सरदार है। अक्ल चरने गई है। दस-बीस जूते मारूँगा तब अक्ल आयेगी...."

टुनटुनवा ने लपक कर, मूरतसिंह के चरणों पर माथा रख दिया। बोला—"धर्मावतार! कसूर माफ हो। कभी-कभी मेरा सर फिर जाता है। मैं अक्ल का दुश्मन बन जाता हूँ।"

मूरतसिंह ने गुस्से में अपने पाँव से उसका माथा झिटकते हुए कहा—"तो सर पर घिकुवार का गूदा छोप कर दिमाग बराबर ठंडा रखा कर!"

"धन्य सरकार! आपने लाख रुपये की एक ही दवा बता दी।" टुनटुनवा प्रसन्नता प्रकट करते हुए बोला—"आपकी आज्ञा सरकार, सिर आँखों पर। कल से ऐसा ही करूँगा।"

"कबूतरी, उस उल्लू के पट्ठे से कटोरा ले ले।"

मूरतसिंह की नाक पर अब भी गुस्सा कबड्डी खेल रहा था!

टुनटुनवा ने आगे बढ़ कर, कबूतरी की हथेली पर कटोरा रख दिया। मूरतसिंह को अचानक कोई बात याद आ गई। बोले—"टुनटुनवा, दिन में मैंने थाल में दो-चार रोटियाँ छोड़ दी थीं, उसे लाकर कबूतरी को दे दे।"

"सरकार!" टुनटुनवा ने सकुचाते हुए कहा—"वही प्रसाद पाकर तो बन्दा आपकी खिदमत में डँटा है।"

"तू पेटू है। हाथी के बराबर खाता है। अपनी खुराक कम कर।" मूरतसिंह कटोरे से मांस के टुकड़े निकाल खाने लगे।

"सरकार! थाल में आप अपनी खुशी से जो प्रसाद छोड़ देते हैं, उसी के बल पर तो जिन्दा हूँ। हुक्म होगा, तो फूल सूँघ कर ही पेट भर लिया करूँगा।"—टुनटुनवा ने दाँत निपोर दिए।

बाबू मूरतसिंह ने उसकी बातों पर कान दिये बगैर कहा—"आज कितने कबूतर शहीद हुए थे?"

"केवल पाँच ही सरकार।"

"अरे, पाँच कबूतर का मांस केवल कटोरा भर!"—मूरतसिंह की आँखें कपाल पर चढ़ गईं। बोले—"बुला, बेईमान रसोइये को! मैं उसकी गरदन की मैल छुड़ा दूँ।"

"धर्मावतार!" टुनटुनवा गिड़गिड़ा उठा—"यह तो बोतल देवी की पूजा के मौके के लिए है। बाकी भोजन के साथ हाजिर करूँगा।"

मूरतसिंह कबूतर के माँस का मजा लेने में लीन हो गये।

टुनटुनवा उनका मुँह निहारता रहा।

"हरामजादे, लालची कुत्ते की तरह क्यों मुँह निहार रहा है?"

एकाएक मूरतसिंह अगियाबैताल बन गये।

टुनटुनवा घबरा गया। दाँत निपोर कर कहा—"हुक्म सरकार!"

"हुक्म का बच्चा!" मूरतसिंह गरज उठे—"जवानी की खाई

लाँघ गया, मगर अक्ल के पीछे लट्ठ लिये फिरता है। ऊँट बूढ़ा हुआ, मगर मूतना न आया।"

"हाय, हाय, सरकार को पानी देना भूल गया।"

वह घड़े की ओर लपका।

"काठ का उल्लू!" मूरतसिंह बोल उठे—"मुझे पानी नहीं चाहिए।"

"मेरा माथा फिर गया है।" टुनटुनवा ने माथा पीट लिया। बोला—"बोतल देवी की पूजा में भला पानी का क्या काम! नेपाली दारू? अभी लीजिए...." वह बड़ी तेजी से कमरे के बाहर हो गया।

मूरतसिंह, कबूतरी की ओर मुड़ पड़े—"तू क्यों उदास होती है? तेरे लिए भी पाव-आधपाव चिउरा मँगवाये देता हूँ। डट कर, चबा लेना...."

"उसकी क्या जरूरत!" कबूतरी बोली—"आपकी बातें ही पेट भरने के लिए काफी हैं।"

"धुत्! भला बातों से पेट भरता है!" हँस पड़े—"बड़ी भोली है तू...." कबूतरी के कपोल पर हलकी चपत लगाने के लिए हाथ बढ़ाये मगर उसने मुँह फेर लिया।

मूरतसिंह चौंक पड़े—"धत्तेरे की! मेरी उँगलियाँ तो शोरबे से गीली हैं!....हैं....हैं....हैं....हैं....हैं...."

टुनटुनवा बोतल और गिलास लिये आ पहुँचा।

मूरतसिंह ने कबूतरी को संकेत किया, वह बोतल और गिलास थाम ले। उसने आदेश पालन किया। मूरतसिंह बोल उठे—

"टुनटुनवा, कहीं से पाव-आध पाव चिउरा माँग ला।"

"राम-राम।" टुनटुनवा ने मुँह बना कर कहा—"सरकार, आप चिउरा चबायेंगे? पेट में मरोड़ शुरू हो जायेगी।"

"कामचोर है तू।" मूरतसिंह उबल पड़े। बोले—"जा, भीखू बनिये की दुकान में, आध सेर लाना!"

"जैसी सरकार की मर्जी।" टुनटुनवा ने उत्साहपूर्वक कहा—"मैं दो सेर उठा लाऊँगा। जब क़ीमत ही नहीं देनी है तब पाव भर ही क्यों लाऊँगा?"

"बातें मत बना! कबूतरी को देख, बेचारी भूख से अधमरी हो रही है।" मूरतसिंह ने इस प्रकार मुँह बनाया मानो कबूतरी की तकलीफ से उनकी छाती फट रही हो।

"मालिक, आप मेरी चिंता न करें। उपवास करने की भी मेरी आदत है।" कबूतरी के अधरों पर व्यंग्य पूर्ण मुस्कान फूट गई। बोली—"मेरे लिये जीतू बनिया पर आफत ढाना ठीक नहीं।"

"आफत कैसी?" मूरतसिंह अचरज से बोले—"वह मक्खीचूस, मेरे गाँव में ही तो दुकानदारी करता है। मैं उससे टैक्स नहीं लेता...."

"धर्मावतार!" टुनटुनवा ने कहा—"जीतू बनिया चिकने मुँह का ठग है। गाँव के छोकरे चोरी-चोरी धान की बालियाँ छोपा करते और जीतू का घर भरते हैं। जीतू उन्हें बीड़ी और बतासे दिया करता है। उस बेईमान को जेल भेजवा देना चाहिए।"

शराब से भरा गिलास कबूतरी से लेकर, मूरतसिंह ने कहा—"भूखला को सात-आठ साल के लिए चक्की चलाने का फैसला सुन लूँ तो उसे भी देख लूँगा।"

खाली गिलास लेती हुई, कबूतरी काँप उठी।

"चोरी का जुर्म और सात-आठ साल तक बड़े घर की मेहमानदारी, हे भगवान!"—टुनटुनवा की आँखें फटी रह गईं।

"तू गधा है।" मूरतसिंह मुस्कुरा उठे। बोले—"दारोगाजी उस पर डकैती का इलजाम लगाने का वचन दे गये हैं।"

"तब तो उसे दस की सजा भी मिल सकती है।" टुनटुनवा ने कहा—"सरकार, उस पर खून करने की गवाही दिलवा दी जाय।

जिन्दगी भर के लिये रोग छूट जायगा। कबूतरी को कोई 'छान-पगहा' लगाने वाला न रहेगा। वह एकदम आज़ाद हो जायगी।"

"खूब याद दिलायी।" मूरतसिंह दूसरी बार गिलास खाली करने के पश्चात् बोले—"दो-चार आँखों देखी गवाही देने वालों की जरूरत है। भूखला फाँसी पर ज़रूर लटक जायगा।"

"दस-पाँच रुपये कुर्बान करने पड़ेंगे।"

"तू ने भंग तो नहीं पी है?"

"नहीं सरकार।" ढुनढुनवा बोल उठा—"वैसे तो एक चवन्नी दछिणा के साथ पेट भर दही-चिउरा पाकर, झूठी कसमें खाने वालों की कमी नहीं, मगर खून का मामला संगीन होता है...."

"उल्लू!" मूरतसिंह अपने खुशामदी टट्टू की मूर्खता (!) पर हँसते हुए बोले—"मेरे बाप बाबू सूरतसिंह के रोब का भूत भला किस दिन काम आयेगा! तुझे तो मालूम ही है, उनके डर से चींटी भी पर नहीं हिलाती थी।"

"मालूम क्यों नहीं सरकार? मेरे बाप उनकी खिदमत करते-करते ही मरे।" ढुनढुनवा ने कहा—"हाँ, आपका प्रताप भी कुछ कम नहीं। आपका नाम सुनते ही बड़े-बड़ों की धोती ढीली हो जाती है।"

"ढुनढुनवा!"—मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरते हुए कहा—"जब मेरी दोस्ती एम० एल० ए० से है और उनकी पहुँच मिनिस्टरों तक तो मुझे भगवान से भी डर नहीं।"

"आप जैसे हातिमों से भगवान भी भागा करते हैं, सरकार।"

"तुम ठीक कहते हो चाचा।"—कबूतरी बोल उठी—"उन्हें, तंग करने के लिए, गरीब ही मिलते हैं।"

ढुनढुनवा के साथ ही मूरतसिंह ने भी कान उठा लिये। नशे में झूमते हुए वे बोले—"क्यों भगवान पर उँगली उठा रही है कबूतरी?

वे तो अपनी चारों भुजाओं से तेरी रक्षा कर रहे हैं। तुझे 'भूखला' से डर लगता था और उसे भगवान ने तेरी राह से हटा दिया।"

"कबूतरी, इससे बढ़कर तेरी भलाई और क्या हो सकती है!" ठुनठुनवा ने कहा—"भगवान तुझ पर खुश हैं।"

"चाचा!" कबूतरी बोली—"वे दिन भर मजूरी करते थे; लकड़ी-नमक जुटाते थे। अब तो भगवान ही मालिक हैं...."

"अब तू खुद मजूरी कर, पेट-पूजा करना!" ठुनठुनवा ने कहा—"इसके लिए सरकार खफा न होंगे।"

"तू क्यों नाक से सितार बजाती है?" मूरतसिंह ने कहा—"मेरे बैलों के लिए घास गढ़ना; सानी-पानी देना; चौका-बर्तन करना; झाड़-बुहार में मन लगाना और रात में मेरी खिदमत में रहना। जीने-खाने के लिए मेरे दरबार से कुछ-न-कुछ मिल ही जायगा। भला मैं तुझे मरने दूँगा!...."

"सरकार के दरवाजे पर हाथी का पेट भरता है तो तेरा पेट खाली ही रहेगा?" ठुनठुनवा बोला—"मालिक की जिन्दगी मना रे, तू दूध से कुल्ला करेगी।"

कबूतरी ने मुँह बन्द रखने में ही अपनी भलाई देखी।

"धर्मावतार!" ठुनठुनवा दाँत निपोरकर बोला—"हुक्म मिल जाता तो मैं नदी की ओर सैर-सपाटा कर आता। पेट में मरोड़ हो रही है। जल्द इजाजत नहीं मिली तो...."

"जा साले, तुझे रोकता कौन है!" और मूरतसिंह, कबूतरी की ओर मुखातिब हुए। बोले—"भुखला के लिए क्यों गोंइठा से आँसू पोंछ रही है? उठकर, दरवाजा तो बन्द कर ले...."

कमरे से बाहर निकलते ही ठुनठुनवा के कानों में किवाड़ बन्द करने की मधुर ध्वनि गूँज उठी।

वह एक कमरे में घुसा। किवाड़ लगा लिये। आलमारी खोली।

वहाँ उसने कबूतर का मांस छिपा रखा था। रसोइये से माँग-कर, बाबू मूरतसिंह के लिए ले जाते समय उसने हाथ की सफाई दिखला दी।

मांस चखने के बाद, उसने सुरा भवानी की पूजा की। महाप्रभु 'चार सौ बीस' की दया से उसे सुरा भी सुलभ थी।

टुनटुनवा के जाने के बाद बाबू मूरतसिंह को उसका ध्यान आया। उसे चिउरा लाने का हुक्म दिया गया था, मगर उसने पूरा न किया। दिमाग का पारा अचानक चढ़ गया। दाँत पीसकर बोले—"साला! नम्बरी हरामी है।"

"क्या हुआ मालिक?" कबूतरी सहम गई।

"तेरे लिए चिउरा नहीं ला सका। बहाना बनाकर, टल गया।"

"जाने दीजिए। मुझे भूख नहीं है।"

"तू पगली है।" मूरतसिंह ने कहा—"उठा ले कटोरा। जो—कुछ बचा है, चख ले। दारू भी थोड़ा है। तू ही पी जा।"

कबूतरी के पास साहस कहाँ, जो बाबू मूरतसिंह का हुक्म टाले।

"आज मेरे थाल की जूठन तुझे ही मिलेगी। हरामजादे टुनटुनवा को रात भूखे ही गुजारनी होगी। जैसी करनी वैसी भरनी।"

और उस समय टुनटुनवा नशे में लड़खड़ाता नदी की ओर बढ़ रहा था। एक आमों का बाग मिला। वहाँ अँधियारा था। उसे अपने बीते दिनों की प्रेम-कहानी याद आई। उस अँधियारे में ही वह मोटरा की जोरू इलइचिया के साथ लैला-मजनू की नौटंकी खेला करता था।

डोलडाल से फ़ुरसत पाकर, वह गाँव की ओर लौटा।

उसके कदम इलइचिया के घर की ओर बढ़ रहे थे।

"कौन है रे?" आहट पाकर इलइचिया पूछ बैठी।

उसे कोई उत्तर न मिला। हाँ, आँगन में उसने एक पुरुष की आकृति देखी। अँधेरे के कारण पहचान न सकी।

"बोलता क्यों नहीं? मुँह में क्या दही जमा है?"

वह ढिबरी लिये आँगन में आई।

"इलायची!" ढुनढुनवा के मुँह से निकला।

और स्वर पहचानते ही इलइचिया बारूद की तरह भभक उठी—"भाग, नहीं तो झाड़ू मारूँगी मुँहजरे।"

"आँखें मत उलट...."

"बेहया! आँख में पानी नहीं। दुतकारती रहती हूँ, मगर मानता नहीं। अड़ियल टट्टू। लतखोर।"

"पहले मैं लतखोर नहीं था?"

"तेरे मुँह में आग...."

"गुस्से के समय तू बहुत हसीन लगती है...."

"खबरदार, जो हाथ लगाया। ढिबरी का तेल तुझ पर डाल दूँगी।"

"चाहे जान ले लो, मैं तो तेरा गुलाम हूँ।"

"जा, उस कबूतरी के आगे यह नाटक दिखाना।"

"तूने किसका नाम लिया?" ढुनढुनवा ने दाँतों तले उँगली दबा ली—"यह बात जुबान पर भी मत लाना। वह मालिक के पास...."

"किसी और को बहकाना। मालिक उस पर पहरा बैठाये हैं?"

"मैं तो तेरा हूँ। तेरे बिना...."

और इलइचिया डपट उठी—"चुप रह। गाल मत बजा।"

"इतरा मत। चार दिनों की चाँदनी फिर अँधेरी रात।"

"बुलाऊँ उनको?"

"मोटरा को?"

"हाँ ! ये गड़ासे से तेरा धड़ अलग कर देंगे ।"

"गिदड़भबकी किसी और को दिखाना ।" टुनटुनवा ने कहा—"वह तो तेरे आशिक के पाँव दबाता होगा ।"

"किसका ?"—इलइचिया जल उठी ।

"लोटासिंह का !....क्यों, नहीं है वह तेरा प्रेमी ?"

"तुझे इन बातों से मतलब ?"

इलइचिया ने ढिबरी ताख में रख दी ।

"मेरी बिल्ली और मुझसे ही म्याऊँ ?" उसने कलाई पकड़ ली ।

"छोड़, छोड़, कोई देख लेगा ।"

एक झटके में इलइचिया अलग हो गई ।

"मुँह में लगाम लगा । जुबान पर काबू रख । जानती नहीं कि मैं बाबू मूरतसिंह का खास खिदमतगार हूँ ? झोंटा नोंचवा लूँगा...."

टुनटुनवा की धमकी ने जादू का काम किया । वह नरम हो गई । बोली—"गाँव में हम दोनों काफी बदनाम हो चुके हैं । उन्होंने सख्त हिदायत की है, तुम दोनों को एक साथ देख लूँगा तो सर अलग कर दूँगा । मेरी राय मानो और रफूचक्कर हो जाओ....दोनों की जान मुफ्त में चली जायगी ।"

"लोटासिंह के बारे में क्या लोगों को पता नहीं ? तू तो त्रिया-चरित्र का सहारा ले रही है ।"

इलइचिया के माथे पर बल पड़ गये । वह लहू का घूँट पीकर बोली—"यह झूठ है । तुम ताने मत मारो ।"

"यही सही, मगर आज तुझे मेरे साथ चलना ही होगा ।"

टुनटुनवा की नाक पर गुस्सा देख, इलइचिया घबड़ा गई—पूछ बैठी—"कहाँ ले चलोगे ?"

"उसी बगीचे में, जहाँ हम पहले मिला करते थे।"

"ठीक है। मैं चलूंगी। तुम वहाँ मेरी राह देखो।"

"देख, बहाने से मुझे चिढ़ है।" ढुनढुनवा ने तेवर बदलकर चेतावनी दी। बोला--"दस मिनट के भीतर तू वहाँ न पहुँचेगी तो लौटकर मैं तेरे घर में आग लगा दूँगा।"

इलइच्चिया का खून सफेद हो गया।

और बागीचे की ओर बढ़ता हुआ, ढुनढुनवा सोच रहा था—"मोटरा और लोटासिंह उसकी राह में काँटे हैं। काँटे साफ करने के लिए क्यों न कोई दाँव लगाऊँ! सीधी उँगली से घी नहीं निकलता।...."

बरसे कंबर भींजे पानी

सुबह के जलपान के बाद, बाबू मूरतसिंह बैठकखाने में पहुँचे। मुन्शी चम्पतलाल ने झट चश्मा उतारकर उन्हें सलाम किया।

"कब आये मुन्शी जी!" बाबू मूरतसिंह के मुँह से डकार निकली।

"मैं तो रात ही सरकारी खिदमत में पहुँच गया था।"

"भूखला के निशान सादे कागज पर हैं न?"

"एँह, कई निशान हैं धर्मावतार।" मुन्शीजी ने कहा—"हुजूर की नजर टेढ़ी हो जाय तो उसके सर पर बाल न उगने पायेंगे।"

"बस, ठीक है।" मूरतसिंह ने संतोष की साँस ली।

लोटा भर दूध लिये टुनटुनवा आ पहुँचा। गिड़गिड़ाकर बोला—"मालिक, इस पर भी दया करें।"

"क्या है बे?"

"दूध है सरकार।"

बाबू मूरतसिंह ने मुँह बिचकाया और पेट पर हाथ फेरते हुए कहा—"रहने दे, पेट में तिल धरने की जगह नहीं।"

"सरकार, यह तिल नहीं दूध है।" टुनटुनवा बोल उठा—"खूब ही औटा कर लाया हूँ। रबड़ी का मजा मिलेगा। सच-झूठ की परीक्षा कीजिए।"

"हठ करता है तो गिलास ले आ! आज मुंशी जी भी रबड़ी का मजा लूट लें।" बाबू मूरतसिंह मुन्शी जी की ओर देखने लगे।

"हुजूर, आपकी दया से मेरे चौके में हर रोज पाव-आध पाव मलाई तो बिल्ली चखा करती है...."

और मुन्शी जी के मुँह से बात छीन कर, ढुनढुनवा बोल उठा—"यह सब सरकारी माया है मुन्शी जी।"

"बेशक।" मुन्शी जी ने कहा—"अगर वर न रहे तो बराती को भला कौन पूछे!"

"एक गिलास आप भी पी लीजिए। सरकारी हुक्म टालना मुनासिब नहीं।"

"तू गिलास तो ले आ!" मूरतसिंह ने मुँह खोला—"मुन्शी जी को दूध पीना ही पड़ेगा।"

"मुझे इनकार नहीं सरकार।" मुन्शी जी बोल उठे।

ढुनढुनवा दो गिलास उठा लाया। और एक-एक गिलास मूरतसिंह और मुन्शी जी को पकड़ाने के बाद उसने लोटे में देखा, लगभग पाव भर दूध और बच रहा था। वह अजिजी से बोला—"सरकार, थोड़ा और है। इस पर भी कृपा कीजिए।"

"सरकार का बच्चा! तू मुझे मौत के घाट उतारना चाहता है।" दूध पीने के बाद मूरतसिंह ने क्रोधावेश में गिलास फेंक कर कहा—"अब मैं बूँद भर भी मुँह में न डालूँगा।"

"और आप मुन्शी जी?" ढुनढुनवा ने मुन्शी जी की ओर प्रश्न भरी दृष्टि डाली। बोला—"पाव भर और बचा है।"

"उसे मालिक का नाम लेकर, तू ही पी ले।" मुन्शी जी ने कहा।

"बड़ी कृपा मुन्शी जी।" ढुनढुनवा मुँह लटका कर बोला—"मैं तो गुलाम हूँ। कहीं दूध का चसका लग गया तो रोज-रोज कहाँ पाऊँगा? यह हुजूर लोगों के लिए ही बना रहे।"

सामने एक कुत्ता बैठा था। उसने उसे लक्ष्य कर कहा—"आऽ तूऽऽ भूखा!"

कुत्ता पूँछ डुलाता आ पहुँचा। टुनटुनवा ने कहा—"भूचा! तू सरकारी हवेली के सामने रात-रात भर भूँकता रहता है, इसलिए दूध का हकदार तू भी है।"

लोटे का दूध उसने जमीन पर उड़ेल दिया।

पूँछ डुलाते-डुलाते भुचा नामक कुत्ता उसे चाट गया।

टुनटुनवा लोटा-गिलास लिये हवेली के भीतर घुस गया।

रसोइये के चेहरे पर घबड़ाहट थी। टुनटुनवा पर नजर पड़ते ही वह बोल उठा—"लोटासिंहवा बौड़म बना इधर ही आ रहा है। वह देखो!" उसने खिड़की की ओर संकेत किया।

टुनटुनवा ने लापरवाही से मुँह बिचकाते हुए कहा—"आने दो, मुझे उसकी चिंता नहीं।"

"यह दूध तो पी लो।" रसोइये ने एक छोटी-सी बालटी उसकी ओर बढ़ा दी जिसमें लगभग तीन सेर दूध था।

"इतना ही?" टुनटुनवा चौंक उठा।

"मैं अपना हिस्सा पी चुका हूँ।" रसोइये ने कहा—"जल्दी करो, शायद इससे भी हाथ धोना पड़े।"

"वह क्यों?" टुनटुनवा ने सिर उठाया।

"टुनटुनवा!" तभी बाबू मूरतसिंह पुकार उठे।

झट उसने बालटी ओंठों से लगा ली।

"क्या करता है रे?" मूरतसिंह गरज उठे।

"सरकार!" डकारता हुआ टुनटुनवा बैठकखाने में पहुँचा। उसने लोटासिंह पर उड़ती नजर डाली, जो उसे घायल शेर की तरह घूर रहा था मानो कच्चे ही निगल जायगा।

"मुन्शी जी, एक मैं हूँ जो बगैर खाये-पिये सरकारी खिदमत में डटा रहता हूँ और कोई ऐसा भी है, जो सरकार के नाम पर रोज

पसेरी भर दूध सुड़कता है, मगर काम के नाम से देह चुराये फिरते है।" उसने लोटासिंह की ओर तिरछी नजरें डालीं।

लोटासिंह लहू का घूँट पीकर रह गया। उसने बाबू मूरतसिंह से आकुल स्वर में कहा—"धर्मावतार, मेरे साथ इंसाफ होना चाहिए।"

बाबू मूरतसिंह ने आँखें तरेरकर कहा—"तू खलीफा का दूध क्यों उठा लाया? बता नहीं तो जूते-जूते पीट दूँगा।"

"कैसा दूध सरकार?" टुनटुनवा ने विस्मय से कहा—"खलीफा ने गाय-भैंस भी रखी है? मुझे तो कुछ नहीं मालूम।"

"झूठ क्यों बोलता है?" लोटासिंह ने क्रोध दबाते हुए कहा—"मोटरा, महँगुआ और जोखू राउत के यहाँ से तू दूध नहीं ले आया?...."

"सरकार के खास खिदमतगार को आप झूठा बना रहे हैं। आपको सरकार का डर नहीं लगता?" टुनटुनवा तैश में आ गया। बोला—"रोज-रोज आप उन लोगों से माँगकर दूध पीते थे और आज खुद सरकार और मुन्शीजी पी गये तो नीली-पीली आँखें दिखाने चले आये। कैसा जमाना आ गया है। पहले भीतर तब देवता-पितर।"

"ठीक ही तो कहता है टुनटुनवा।" मुन्शीजी ने मुँह खोला—"थैरो गाँठ से तो देने नहीं पड़ते तब अफसोस किस बात का है तुम्हें?"

"खलीफा!" टुनटुनवा ने कहा—"आप नाहक ही रंज करते हैं। किसी को पकड़कर, दूध वसूल कर लीजिए।"

"गाँव के सारे ग्वाले तो अपने ही आसामी हैं। वह दूध क्यों न देंगे?" मुन्शीजी ने शब्दों पर जोर देकर अधिकार का प्रदर्शन किया।

लोटासिंह क्या करता, ओंठ चबाकर रह गया।

"खलीफा, मुँह क्या देख रहे हो! जाओ न गाँव में।" मूरतसिंह

ने कहा—"गाँव ही में तो दूध मिलेगा। किसी से पीने लायक ले लो। भैंस आसमान में तो रहती नहीं, वे मेरी ही जमींदारी में रहती हैं। कौन माई का लाल है, जो दूध देने से इन्कार करेगा।"

तभी रसोइया आ पहुँचा। उसने कहा—"मालिक, चौके में तरकारी के लिए केवल दो बैंगन बचे हैं। खलीफा को हुक्म दीजिए, वे किसी के छप्पर से लौकी या कुम्हड़ा तोड़ लायें।"

"खलीफा!" बाबू सूरतसिंह के मुँह से निकला।

"जी धर्मावतार।" खलीफा ने कान खोल दिये।

"कुछ सुना तुमने?"

"जी हाँ गरीबपरवर!"

"तो खड़े क्यों हो? क्या मैं बिना तरकारी के ही भोजन करूँगा?"

"जा रहा हूँ सरकार।"

और वह साँड की चाल से चल पड़ा।

रसोइये के साथ ठुनठुनवा हवेली के भीतरी हिस्से में पहुँचा।

"चौबे!"

"हाँ।"

"देखा न मेरा करतब? लोटासिंह की बोलती बन्द हो गई।"

"तुम हो गुरूघण्टाल।" रसोइयाँ मुस्कुरा पड़ा।

"अभी एक बार और लोटासिंह को मुँह की खानी पड़ेगी।"

"वह कैसे?" रसोइया उत्सुक हो उठा।

"वह गाँव भर चक्कर लगायेगा, मगर उसे दूध कहीं न मिलेगा।"

"वह क्यों?"

"यह सब मेरी करामात है।"

"बताओ यार, पेट में घोड़े दौड़ने लगे।"

"मैंने गाँव के सभी ग्वालों से कह दिया है, आज सरकार के चौके में गाँव भर का दूध जमा होगा।" ढुनढुनवा ने मुस्कुराते हुए कहा—"जो कोई बूँद भर भी दूध इधर-उधर करेगा उसे बीस रुपये जुरमाने देने पड़ेंगे।"

"वाह, मेरे यार, वाह!" रसोइये के मुँह से निकला।

ढुनढुनवा विजय के गर्व से मुस्कुराने लगा।

"लेकिन यह बात मेरी समझ में नहीं आई।" रसोइया बोल उठा—"तुम लोटासिंहवा के पीछे क्यों पड़े हो?"

"जानबूझकर अनजान बन रहे हो यार।"

ढुनढुनवा ने रहस्यभरी दृष्टि डाली। रसोइया मुस्कुरा पड़ा। बोला—"मैं समझ गया। इलइचिया ही इस महाभारत की जड़ है।"

"रामायण चौबे!" ढुनढुनवा ने तत्परता दिखलाते हुए कहा—"अब तुम दूध रखने के लिए बर्तन खाली कर लो। ग्वाले आ रहे हैं।"

उसने खिड़की से कई ग्वालों को मटकियाँ लिये आते देखा था।

ग्वालों की कतार देख बाबू सूरतसिंह के कान खड़े हुए। उन्होंने मन्द स्वर में मुन्शी जी पर अपनी आशंका प्रकट की—

"आज दाल में काला मालूम पड़ता है।"

"आप चिन्ता न करें।" मुन्शीजी ने आहिस्ते से कहा। और वे एक बूढ़े ग्वाले से पूछ बैठे—"बद्धला राउत, बात क्या है?"

तभी ढुनढुनवा आँधी की तरह आ पहुँचा। उसने मुँह खोला—"कोई बात नहीं सरकार! आज गाँव के सभी ग्वाले सरकार को खीर खिलाने का प्रण कर चुके हैं...." और उसने आँख मार दी।

मुन्शीजी मुस्कुरा पड़े। मुस्कुराते हुए बोले—"मैं समझा था, ग्वालों ने सरकार को, काशी के विश्वनाथ की तरह दूध से नहलाने

का विचार किया है। मालिक और राजा तो ईश्वर के बराबर होते हैं।"

"सवा सोलह आने सच है।" टुनटुनवा ने बहुला राउत की ओर देखा—"क्यों बहुला राउत ?"

"भला इसमें कौन जुबान पकड़ेगा!" बहुला राउत ने कहा—"हमारे मालिक तो भगवान से बढ़कर हैं। हमलोग मालिक के राज ही में तो जीते-खाते हैं...."

और टुनटुनवा, ग्वालों से मटकियाँ ले-लेकर, हवेली में दूध पहुँचाने लगा।

कड़ाहियाँ, बालटियाँ, गगरे, लोटे, कटोरे, गिलास, थालियाँ, सब-के-सब दूध से भर गये। रसोइये के माथे पर चिन्ता की रेखाएँ उभर आईं।

क्षण भर बाद ही उसने उदास होकर कहा—"सभी बर्त्तन तो दूध से भर गये, अब उसे कहाँ रखा जाय ?"

"घबड़ाते क्यों हो ?" टुनटुनवा ने लापरवाही से कहा—"जितनी मटकियाँ बची हैं, उनके दूध हम आँगन में उड़ेल देंगे।"

"इससे तो बेहतर होगा, हम गाँव के बच्चों को...."

"हैं....हैं....हैं....हैं!" टुनटुनवा ने कानों में उँगलियाँ डाल लीं। बोला—"तुम्हारी अकल चरने गई है, जो अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मार रहे हो।"

"यह कैसे ?" रसोइया चौंक उठा।

"सरकार का गुस्सा क्या तुम्हें मालूम नहीं ?"

"मालूम तो है। मगर मेरी समझ में यह बात नहीं आई।"

"तुम घोंघाबसन्त हो। ऐसी बात सरकार सुन लेंगे तो गरदन का मैल छुड़ा देंगे। तुम्हारी जान क्या फालतू पड़ी है ?...."

"पर इसमें सरकार का क्या जाता है!"

"अक्ल के दुश्मन !" टुनटुनवा झुँझला उठा—"बाघ दयालु बन जायगा तो उसे भूखों छटपटाकर मरना पड़ेगा...."

और आवेश में ,वह मटकियों का दूध आँगन में बहाने लगा। मटकियाँ वापिस होते ही ग्वाले झुक-झुककर, सलाम करते हुए लौट गए। टुनटुनवा गाँजा मलता हुआ, बाबू मूरतसिंह के पास आ बैठा।

"टुनटुनवा !"

"जी सरकार।"

"गाँजा कब पिलायेगा ?"

"सरकार, फौरन से पेश्तर।"

तभी लोटासिंह दो कद्दू लिये आ पहुँचे। बोले—"टुनटुनवा, इसे चौके में दे आ।"

"केवल दो लौकियाँ ?" टुनटुनवा बोल उठा—"खोदा पहाड़ और निकली चुहिया। धन्य हैं खलीफा! जाइये, चौबे को दे आइये।"

"और नहीं तो क्या ? गाँव भर के छप्पर सूने कर देता ?...."

लोटासिंह बौखला उठे।

"दरबार की प्रतिष्ठा का तो ख्याल करना ही चाहिए था।" टुनटुनवा अँगूठा नचाकर बोला—"न होता, टोकरे भर लिये आते। आपकी अकल, कुश्ती के दाँव-पेंच से घबड़ाकर, हवा खाने चली गई है। मुझे मुफ्त का माल मिले तो दस-बीस टोकरे से कम न लाऊँ...."

और उसने गाँजे की चिलम, मूरतसिंह के हाथ में दे दी। मूरतसिंह दम लगाने में मशगूल हो गये।

लोटासिंह क्रोध दबाये हुए, रसोइये को लौकियाँ दे आये। क्षण भर बाद उबल पड़े—"धर्मावतार, मुझे दूध नहीं मिला।"

"तो खुद सरकार जाकर आपके लिए दूध ला दें ! आप यहीं

तो चाहते हैं। आप में आकर बातें करें, खलीफा!" टुनटुनवा गरज उठा।

हैं....हैं....हैं....हैं....हँस पड़े मूरतसिंह। हँसते-हँसते बोले—"आपने सुना मुन्शीजी, लोटासिंह को चिराग लेकर खोजने पर भी दूध नहीं मिला।"

मुन्शीजी ने मुस्कुराते हुए लोटासिंह की ओर देखा। बोल उठे—"खलीफा! सीधी उँगली से घी नहीं निकलता। दो-चार की चुटिया पकड़िए और दो-चार लात जमाइये तब देखिए, कैसे नहीं आपको दूध मिलता। नाचे कूदे तोड़े तान, ताके दुनिया राखे मान।"

"आप दो-चार के लिए कहते हैं, मैं दस-बीस पर मन का बुखार उतार चुका हूँ।" लोटासिंह ने कहा—"कोई दूध देने के लिए तैयार नहीं होता। सभी एक ही बात कहते हैं, आज भर के लिए माफ़ करें...."

"मुन्शीजी आपने मेरी करामात देख ली।" टुनटुनवा ने कहा—"सुबह में मैंने ज़ुबान भर हिला दी और गाँव का कुल दूध हवेली में पहुँच गया। बेचारे खलीफा हाथ-पाँव मारकर हार गये, मगर बूँद भर दूध हाथ नहीं आया।"

"तू बेजोड़ है टुनटुनवा।" मुन्शीजी बोल उठे।

टुनटुनवा उत्साह से भर गया। उसने बाबू मूरतसिंह के पाँव दबाते हुए कहा—"इन चरणों का सेवक हूँ मुन्शीजी...."

उसकी निगाह लोटासिंह पर पड़ी, जो खड़े-खड़े ओंठ चबा रहा था। उसके माथे पर बल पड़ गये। उसने व्यंग्य के रस में वाणी को को भिगोकर कहा—"खलीफा! क्या मैं गाजर-मूली हूँ? आप तो इस तरह मुझे घूर रहे हैं मानो खड़े-खड़े ही निगल जायेंगे।"

"क्या चाहते हैं लोटासिंह?" मुन्शीजी पूछ बैठे।

और लोटासिंह के मुँह खोलने के पहले ही टुनटुनवा बोल

उठा—"हाँ, दूध गुड़के बगैर आपसे रहा न जाय तो हाथ फैलाइये। मुँह बन्द रखने से कोई लाभ न होगा। सरकार हुक्म देंगे तो आपका खाली हाथ लौटने न दूँगा।"

"सरकार का तो मैं गुलाम ही हूँ।" लोढ़ासिंह के मुँह से निकला।

"एक बालटी दूध दे दो।" मूरतसिंह ने हुक्म दिया।

"सरकार का हुक्म सर आँखों पर।"

टुनटुनवा ने एक बालटी दूध, हवेली से लाकर, लोढ़ासिंह को सौंप दिया।

उसके आँख से ओझल होते ही टुनटुनवा ने मन का गुबार निकाला—"हाथी, हाथी...."

मूरतसिंह गाँजे के नशे में भकुआ बने बैठे थे। चौंक पड़े—"कहाँ है हाथी?"

टुनटुनवा सिटपिटा गया।

तभी मुन्शीजी सजग स्वर में बोल उठे—"हाथी पर कोई अफसर आ रहे हैं। डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं शायद।"

मूरतसिंह की आँखें खुल गईं। बोल उठे—"टुनटुनवा!"

"सरकार, मैं तो पाँव दबा रहा हूँ।"

"अफसरों के बैठनेवाली कोठरी खोल दे।" मूरतसिंह ने आदेश-पूर्ण स्वर में कहा—"मुन्शी जी के साथ मैं भी वहीं आ रहा हूँ।"

"जो हुक्म धर्मावतार!" टुनटुनवा मुन्शीजी से चाबी ले चला गया।

हाथी से डिप्टी मजिस्ट्रेट उतरे। मूरतसिंह उन्हें निर्दिष्ट स्थान में ले गये। उन्हें बैठने के लिए टुनटुनवा ने एक कुर्सी बढ़ा दी। वे बैठ गये। मूरतसिंह और मुन्शीजी ने भी दूसरी कुर्सियों पर आसन जमाये।....

अफसर के साथ एक चपरासी भी आया था। वह फाइल लिये अफसर के हुक्म की प्रतीक्षा में खड़ा रहा।

"बाबू मूरतसिंह किसका नाम है?" अफसर पूछ बैठे।

"मुझे ही लोग इस नाम से पुकारते हैं।" मूरतसिंह बोल उठे।

"आप ही कोंहड़ापुर के सरपञ्च हैं?"

"जी हाँ, हुजूर।" मूरतसिंह बोल उठे—"बात क्या है?"

"आपके गाँव में कोई भूख से मरा है?"

मूरतसिंह अचरज से चौंक पड़े। बोले—"यहाँ भूख से कोई क्यों मरेगा? मेरी जमींदारी में तो कौआ भी भात नहीं पूछता।"

"यहाँ तो रामराज्य है हुजूर।" मुन्शीजी से चुप न रहा गया। बोल उठे—"रामायण में तुलसीदास ने आज के जुग ही का वर्णन किया है—दैहिक दैविक भौतिक तापा—रामराज्य काहू ना व्यापा।"

"आप कौन हैं?"—अफसर के माथे पर बल पड़ गये।

"मेरा नाम चम्पतलाल है।" मुन्शीजी घबड़ा गये।

"हुजूर, यह मेरे पटवारी हैं।" मूरतसिंह ने कहा।

"और मुखिया का नाम भी तो चम्पतलाल ही है?"

अफसर की उत्सुक दृष्टि मूरतसिंह के मुख पर जम गई।

"जी हाँ हुजूर।" मूरतसिंह बड़े उत्साह से बोले—"आप ही वह महापुरुष हैं!"

"धर्मदास गुमाश्ता और धर्मदास ही पटवारी। कमाल है!"

अफसर मुस्कुरा पड़े।

"जी सरकार।" मूरतसिंह के मुँह से निकल पड़ा।

"भुलेटिया को आप जानते हैं? क्या वह भूख से नहीं मरा?"

"नहीं हुजूर।"—मूरतसिंह शंकित हो उठे।

टुनटुनवा को अपनी स्मरण-शक्ति पर गर्व हुआ। उसने बड़े उत्साह से मूरतसिंह के मुख पर दृष्टि गड़ा कर, कहा—"सरकार, आप

भुलेटिया की मौत को भूल गये ? बेचारे ने अन्न और दवा के बगैर तड़प-तड़प कर जान दे दी।"

"तू झूठों का सरदार है बे।" मूरतसिंह गुर्रा उठे।

"सरकार, मैं इस बार झूठ बोलूँ तो मुझे गोहत्या का पाप लगे।"—टुनटुनवा आवेश में भर उठा—"भुलेटिया ने एक बार जो चटाई पकड़ी, फिर नहीं उठ सका। भूख से छटपटा कर मर गया।"

"यह लुच्चा है।" मुंशी जी ने अफसर से कहा—"इसकी बातों पर विश्वास करना गुनाह है।"

"वाह रे ज़माना! सच बोलूँ तो लुच्चा और झूठा कहलाऊँ—मुन्शी जी!"

"बस, खबरदार! झूठ बोलेगा तो ठीक न होगा।" मुन्शी जी बोल उठे—"ऐसा लबरा खोजने पर भी कहीं मिलेगा ?"

"हे भगवान!" टुनटुनवा ने माथा पीट लिया। बोला—"आप लोग इतना जल्द भुलेटिया की मौत भूल गये। हाकिम को मैं झूठा लगूँ तो वे मुझे हुक्म दें, मैं गवाह बुला लाऊँ।"

"पागल है हुजूर!" मुन्शी जी ने कहा—"इसकी बातों पर कान न दीजिए।"

"मैं पागल हूँ ? वाह मुन्शी जी।" टुनटुनवा के सर पर भूत सवार हो गया। वह बोला—"भुलेटिया की लाश उठाने के लिए कोई तैयार न होता था तो मालिक से हुक्म लेकर मैंने ही उसे डोमों से फेंकवाया।"

"ठीक है।" अफर ने मुस्कुराते हुए मूरतसिंह और मुन्शी जी की ओर देखा। बोला—"मगर उसकी मौत कैसे हुई ?"

"धर्मावतार!" टुनटुनवा ने कहा—"वह मजूरी कर पेट पोसता था। एक दिन उसे बुखार ने धर दबाया और वह भूख-प्यास से तड़प

कर....” उसी समय उसकी निगाह मुन्शी जी पर पड़ी। मुन्शी जी ने आँख मारी।

टुनटुनवा अचानक ही चुप हो गया।

अफसर ने प्रश्न किया—“तो भुलेटिया भूख से ही मरा।”

“नहीं सरकार, वह मरा नहीं....” और वह मुन्शी जी का मुँह निहारने लगा।

“हुजूर, मैंने पहले ही कह दिया है, यह लफंगा है।” मुन्शी जी बोल उठे—“भुलेटिया मर गया, मगर भूख से नहीं, बुखार से। क्यों ठीक है न बे टुनटुनवा ?”

टुनटुनवा समझ गया, उसे मुन्शी जी उल्लू बना रहे हैं। वह बौखला गया। घबड़ाहट में उसके मुँह से निकला—“हुजूर, मुन्शी जी झूठ....नहीं....सच कह रहे हैं, मगर भुलेटिया तो भूख से ही मरा। बुखार उतरा, मगर उसे भोजन नहीं मिल सका....”

“सूअर !” मूरतसिंह उबल पड़े—“होश की दवा कर !”

टुनटुनवा सहम गया। बोला—“नहीं हुजूर, वह बुखार से.... नहीं....यह समझ लीजिए, मरा नहीं, बैकुंठ चला गया।”

“गधा कहीं का !” मूरतसिंह के मुँह से निकला।

“पागल हो गया है।” मुन्शी जी ने कहा।

टुनटुनवा की घबड़ाहट और बढ़ गई। बिगड़ी बात बनाने के लिए उसने मुँह खोला—“सवा सोलह आने सच है। मेरा सिर फिर गया है। कोई बात समझ में नहीं आती।”

“तुम्हें राँची के पागलखाने में भेजना चाहिए।”

अफसर के माथे पर बल पड़ गये।

टुनटुनवा काँप उठा। बोला—“हुजूर, मेरा दिमाग, महीने-दो महीने पर क्षण भर के लिए ही हवा खाने जाता है। वैसे मैं ठीक रहता हूँ।”

और अफसर ने मूरतसिंह से कहा—"मुझे एक गिलास पानी चाहिए।"

"मुन्शी जी, हाकिम के लिये जलपान वगैरह का इन्तजाम होना चाहिए।"

"नहीं।" मूरतसिंह के मुँह की बात छीन कर अफसर ने गंभीर स्वर में कहा—"केवल एक गिलास पानी।"

अफसर का रुख देखकर, जलपान के लिए दुबारा कहने का साहस मूरतसिंह को नहीं हुआ। उन्होंने ढुनढुनवा को पानी लाने का आदेश दे दिया।

और ढुनढुनवा के पीछे-पीछे मुन्शीजी भी हवेली में पहुँचे। आँखें दिखलाते हुए उन्होंने कहा—"ऊँट बूढ़ा हुआ, मगर मूतना न आया।"

ढुनढुनवा भौंचक हो उनका मुँह निहारने लगा।

"उल्लू की तरह मुँह निहार रहा है।"

"मैं क्या करूँ?"

"जुबान पर काबू रखना सीख। सारा गुड़ गोबर कर दिया।"

"मुन्शीजी! मेरी समझ में अभी तक नहीं आया कि सचाई का गला घोंटने में भला लाभ क्या है?"

"तेरे दिमाग में गोबर भरा है।"

"ठीक कहते हैं। लाख अक्ल के घोड़े दौड़ाता हूँ मगर हाथ कुछ नहीं आता। साफ-साफ बतलाइए न।"

"तो सुन ले! भूख से मरने की बात बहुत बुरी है।" मुन्शीजी ने कहा—"इससे गरीबपरवर, धर्मावतार, दयानिधान कहलानेवालों के माथे पर कलंक का टीका लगता है।...."

"बस, आँखें खुल गईं। अब और कुछ कहने की जरूरत नहीं। आप हाथ पर हाथ धरे बैठे रहिए और मेरा करतब देखिए।"

"ठीक है। लोटासिंह को मैं गाँव में भेज दूँ कि वे गाँववासियों को हिदायत कर दें। अफसर के पूछने पर कोई सच्ची बात न उगलने पाये।"

और मुन्शीजी लौट गये।

टुनटुनवा गिलास लिये पहुँचा। उसने अफसर के हाथ में गिलास पकड़ाते हुए कहा—"हुजूर, कुल्ला कीजिए।"

"अरे!" अफसर चौंक पड़े—"इसमें तो दूध है। तू सचमुच पागल है क्या?"

"हुजूर, मैं दूध को पानी नहीं कहता, तब पागल कैसे हूँ?"

"तो तुम दूध से कुल्ला करने की राय देते हो?"

"जी हाँ धर्मावतार। इस गाँव में सभी दूध से कुल्ला करते हैं।"

"विचित्र गाँव है।" अफसर अचरज से भर गये।

"विचित्र नहीं हुजूर, यह रामराज्य का एक नमूना है।" टुनटुनवा उत्साह से बोला—"हवेली में हुजूर कदम ले चलें तो वहाँ आप दूध की नदी बहती देखेंगे।...."

अफसर ने गिलास अधर से लगाया। दो घूँट सुड़कर बोले—"दूध ही तो है।"

"मुझे निरा लबरा मत समझिए।" टुनटुनवा तपाक से बोला—"पानी में आटा-चीनी घोलकर नहीं ले आया हूँ सरकार।"

अफसर ने गिलास खाली कर दिया। बोला—"दूध बहुत मीठा था।"

"हुजूर, आप उसे पी गये—मैंने तो कुल्ला करने के लिए दिया था। कोई हर्ज नहीं, और मँगाए देता हूँ। मन भर के पीजिए।"

दूध से भरी दो बाल्टियाँ दोनों हाथों में लटकाये रामायण चौबे आ पहुँचे।

"इतना दूध ?...." अफसर की आँखें फटी रह गईं। सँभल कर बोले—"सचमुच आपका गाँव बहुत सुखी है।"

टुनटुनवा ने इस बार दूध से भरा एक लोटा अफसर की ओर बढ़ाया।

"नहीं, अब नहीं।" अफसर ने सिर हिला दिया।

हें....हें....हें....हें....हँस पड़े मूरतसिंह। बोले—"हुजूर, यहाँ तो एक आदमी कम से कम पसेरी भर दूध पीता है।"

टुनटुनवा की चाल वे ताड़ गये थे। मुन्शी जी उसकी बुद्धि की प्रशंसा मन-ही-मन कर रहे थे।

"हुजूर, दूध न पियेंगे तो उससे स्नान ही कर लिया जाय। जितना चाहें, दूध मैं ला दूँ।" टुनटुनवा गिड़गिड़ा उठा।

"दूध से स्नान? क्या बकता है!" अफसर के आश्चर्य का ठिकाना नहीं।

"धर्मावतार! दूध से नहाने से शरीर को बहुत लाभ पहुँचता है।"—टुनटुनवा बोल उठा—"शहर में तो इतना दूध मिलेगा नहीं!"

"नहीं, जरूरत नहीं।" अफसर गम्भीर हो गये।

"जाने दो टुनटुनवा, हाकिम की इच्छा नहीं है।" मुन्शीजी ने कहा—"हठ करना ठीक नहीं।"

"हुजूर, हुक्म हो तो गाँव के कुछ लोगों को पूछ-ताछ के लिए बुला दिया जाय।"—मुन्शीजी ने विनम्र स्वर में निवेदन किया।

"उसकी अब ज़रूरत नहीं।" अफसर बोल उठे—"जहाँ इस प्रकार दूध की बाढ़ हो, वहाँ भुखमरी क्या करने आयेगी? अखबार में लोग झूठ ही खबर उड़ा देते हैं।"

बाबू मूरतसिंह उत्साह से भर गये। बोले—"यह हमारी सरकार के दुश्मनों की करतूत है। मेरा बश चले तो ऐसे झूठों को फाँसी पर लटकवा दूँ।"

"धर्मावतार ने मेरे मुँह की बात छीन ली।" टुनटुनवा बोल उठा—"यहाँ हरेक खेत 'रोहू की पेटी' है। बीघे में पचास मन की पैदावार होती है। फिर भी आदमी भूखों मर सकता है! भला इस बात पर विश्वास कौन करेगा?"

"सचमुच यहाँ रामराज्य है।"—अफसर के मुँह से निकला।

और वे हाथी पर सवार हो लौट गये।"

"टुनटुनवा!"—मूरतसिंह गरज उठे।

"धर्मावतार!" टुनटुनवा काँप उठा।

"साले, गाँजा तो पिला...."

रोजा बख्शाने गये नमाज गले पड़ी

मुन्शी चम्पतलाल ने किलकारी मारते हुए कहा—"सरकार, हम बाल-बाल बच गये। यों कहना अनुचित न होगा, हमारा सर ओखल में जाते-जाते रह गया।"

"सवा सोलह आने सच है।" मूरतसिंह बोले—"घरभरवा गाँव के घरभरनसिंह ने एक दर्जन कुएँ खुदवाने के नाम पर, सरकार से रुपये ऐंठ लिये थे और कुओं का कहीं पता न लगा—भंडा फूट गया...."

"कोई-कोई अफसर पत्थर-दिल होता है, जो लाख सर मारने पर भी चाँदी का जूता स्वीकार नहीं करता।" मुन्शी जी ने लम्बी साँस ली।

"इसीलिए तो हमने कुएँ की ओर कम ध्यान दिया और सड़क बनाने का बीड़ा उठाया।" मूरतसिंह मूँछों पर ताव देने लगे।

"क्या हुजूर ने कुएँ के नाम पर हजारों रुपये नहीं लिये थे?"

"जरूर लिये। मगर कुएँ भी तो बनवा दिये।"

"वे कुएँ तो गाँव के चन्दे से बने।"

"उसका सबूत क्या है? जाँच होने पर मैं कहूँगा, कुयें मैंने बनवाये। कौन माई का लाल मेरे खिलाफ सर उठायेगा?...."

"धन्य हैं सरकार।" मुन्शीजी मुग्ध हो गये।

मूरतसिंह के अधर पर मुस्कान थिरक उठी। अपनी अक़्लमन्दी की तारीफ सुनने के लिए लालायित होकर बोले—"और सड़क?...."

मुन्शी जी उनके मन का भाव ताड़ गये। उत्साह से बोल उठे—"धर्मावतार! बेगार में पकड़कर लाये मजदूरों से आपने सड़क

पर जहाँ-तहाँ माटी डलवा दी और बगैर डकार लिये पूरे पाँच हजार रुपये हजम कर लिये।"

"नहीं, एक चौथाई रुपये रिलीफ अफसर पर न्योछावर करने पड़े।"—मूरतसिंह ने कहा—"नेक काम में दूध-अक्षत चढ़ाने ही पड़ते हैं।"

"सच कहते हैं हुजूर।"

"अगर अफसर जाँच करते समय पूछता कि सड़क की मिट्टी कहाँ गई तो आप क्या जवाब देते मुंशी जी?"—मूरतसिंह मुस्कुराते-हुए पूछ बैठे।

"उस समय तो मेरी बोलती बन्द हो जाती सरकार।"

"धुत्! आपके पास भी दिमाग नहीं।" मूरतसिंह हँस पड़े।

"और सरकार उस समय क्या कहते?"

"मैं फौरन जवाब देता—मूसलाधार वर्षा का पानी उसे बहा ले गया।"

"क्या बात है!" मुंशी जी कृतार्थ हो गये।

"हें....हें....हें....हें...." मूरतसिंह उलटा उस्तुरा की करामात पर फूल उठे। अचानक मूरतसिंह की हँसी गायब हो गई। वह गंभीर हो गये। कोई बात याद आ गई थी। बोल उठे—"हम चूक गये।"

"कैसे सरकार?" मुंशी जी चौंक पड़े।

"भगेलुआ की मौत का कारण हमें छिपाना नहीं चाहिए था"—मूरतसिंह ने पश्चात्ताप के कारण मुँह सिकोड़ लिया।

"वह क्यों हुजूर?" मुंशी जी उत्सुकता का आँचल पकड़ बैठे।

"भुखमरी के कारण यह अकाल-पीड़ित क्षेत्र घोषित हो जाता।"

"अहा! तब तो बहार-ही-बहार रहती। खूब ही चाँदी कटती।"

"मुंशीजी, तब पाँचों उँगलियाँ घी में होतीं।" मूरतसिंह बोल

उठे—"राशन और सहायता के रुपये में हम तीन भाग—अगर नहीं—तो आधा भाग पचा ही सकते थे।"

"बेशक। मुँह से डकार भी नहीं निकलती।"

"काश, टुनटुनवा अपनी बातों पर डटा रह जाता!"

"वह तो बेपेंदी का लोटा है।"

"डगरे का बैंगन भी।" मूरतसिंह ने कहा—"हमारी लाल आँखें देखते ही उसने रुख बदल दिया।"

"वह गिरगिट है सरकार।"

"साले ने सारा गुड़-गोबर कर दिया।"

"हजारों का नुकसान हो गया सरकार।"

मूरतसिंह की नाक पर गुस्सा आ गया। गरज उठे—"टुनटुनआ है रे?"

टुनटुनवा हथेली पर गाँजा मलता हुआ हवेली से निकला।

"हरामजादे, इधर आ!" मूरतसिंह दाँत किटकिटाने लगे।

टुनटुनवा के पेट में चूहे कूदने लगे। वह सहमा-सहमा आगे बढ़ा।

"सिर झुका, साले!"

टुनटुनवा ने मूरतसिंह के आदेश का पालन किया।

मूरतसिंह ने उसके सर पर दो जूते जमाये। बोल उठे—"सूअर के बच्चे ने हजारों पर पानी फेर दिया।"

हजारों के घाटे के बदले केवल दो बार उसके सर पर जूते बजे। सस्ते में पिण्ड छूटा। टुनटुनवा ने अपने भाग्य की सराहना की। उसने मूरतसिंह का ध्यान दूसरी ओर बँटाने के लिए कहा—"धर्मावतार, चिलम चूमे घंटों बीत गये। हुक्म हो तो आग रखकर ले आऊँ!"

"उल्लू ! तेरे होश अभी ठिकाने नहीं लगे।" मूरतसिंह ने नरम होकर कहा—"फौरन से पेश्तर पकड़ा दे चिलम।"

"बहुत अच्छा।"—ठुनठुनवा चिलम लेकर, हवेली में घुस गया।

"सरकार!" मुंशीजी बोल उठे—"अब हमें सचेत रहना चाहिए। पंचायत का चुनाव जल्द ही होगा।"

"खूब याद दिलायी।" मूरतसिंह ने कहा—"हमें यही कोशिश करनी चाहिए जिससे आँख के अंधे और गाँठ के पूरे ही पंचायत के सदस्य बनें और हम सरपंच-मुखिया की गद्दी पर जमे रहें।"

"गतवर्ष तो हम वैसे ही उल्लुओं को सदस्य बनाने में सफल रहे।"—मुंशी ने मुस्कुराते हुए कहा—"इस बार भी वैसा ही होगा। वे हमारी हर बात में हुँकारी ही भरते रहेंगे।"

"यह तो होकर रहेगा।" मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरा।

"मत प्राप्त करने के लिए मतदाताओं पर कुछ रुपये भी न्योछावर करने पड़ें तो मुँह न मोड़ना चाहिए।"

"कभी नहीं। ऐसे नेक काम से कैसे जी चुराया जायगा!" मूरतसिंह बोल उठे—"कुछ रुपये तो टेंट से निकालने पड़ेंगे, मगर हमारा रास्ता साफ हो जायगा। हम निर्भय होकर 'उलटा उस्तरा' चलायेंगे...."

ठुनठुनवा चिलम लिये हाजिर हुआ।

दम लगाकर धुएँ का गुबार उड़ाते हुए मूरतसिंह प्रसन्न मुद्रा में बोले—"मुन्शी जी! आप चिन्ता न करें। जब तक हमारे रोब का भूत गाँववालों के सर पर सवार रहेगा, हम छाती पर मूँग दलते ही रहेंगे।"

"खदेरन को पंचायत में घुसने न दीजिए।"

"हरगिज नहीं।" मूरतसिंह गम्भीर हो गये। बोले—"दूध का जला मठा भी फूँक-फूँककर पीता है। मैंने उसे इसलिए सदस्य बनाया

था कि वह मेरी हर बात में हुँकारी भरेगा, मगर वह तो आस्तीन का साँप निकला।"

"मैंने कई बार उसे समझाया भी, मगर वह अड़ियल टट्टू बना रहा।"—मुन्शी बोले—"उसने हर बार मुझे दुतकारते हुए कहा, 'आप लोग तो देश को रसातल में ले जाने के लिए कमर कस चुके हैं....मैंने आप लोगों ही के लिए सत्याग्रह-आन्दोलन में जेल का कष्ट नहीं सहन किया है। मैं ईमान को खटाई में नहीं डालूँगा....जब तक जीवित रहूँगा, सत्य की पूँछ पकड़े रहूँगा।' सरकार, उसने 'उल्टा चोर कोतवाल को डाँटे' वाली कहावत चरितार्थ की।"

"मारिये गोली उस भोंदू को।" मूरतसिंह ने कहा—"मैं उसे कौड़ी का तीन बनाकर रहूँगा। वह न घर का रहेगा न घाट का।"

"धर्मावतार! घर में खदेरन राम चैन की साँस नहीं लेने पाते।"—टुनटुनवा ने मुँह खोला—"उनकी मेहरारू उठते-बैठते कोसा करती है।....वह बराबर यही कहती है, रेंड़ की कण्ठी बाँध-बाँधकर भगत बननेवाले रसगुल्ले से पेट भर रहे हैं और तुम्हें सत्तू की आफत है।"

"हें....हें....हें....हें" हँस पड़े मूरतसिंह। हँसते-हँसते बोले—"यह कलयुग है। इस युग में जिसने कपट और बल से काम नहीं लिया, उसकी लुटिया डूबकर रहेगी।"

अचानक उनकी हँसी रुक गई। उनकी दृष्टि एक युवक पर पड़ी। उसके वस्त्र साफ-सुथरे थे।

"आप कौन हैं?" मुन्शीजी पूछ बैठे।

"मैं बेतिया का रहनेवाला हूँ...."

"इधर कैसे भूल पड़े?"

"मालगुजारी देने चला आया था।" युवक ने कहा—"आपके गाँव में मेरा एक बीघा खेत है।"

"बड़ी खुशी की बात है।"—मुन्शीजी कागज निकालने लगे।

"आपका खेत कौन जोतता है?" मूरतसिंह पूछ बैठे।

"मेरखून महरा।"

"बटाई है न?"

"जी हाँ।"

"किसके नाम से जमाबन्दी है?" मुन्शी जी ने आँखों पर चश्मा चढ़ाते हुए पूछा।

"हिमालय प्रसाद के।" युवक ने कहा।

"ठीक है। वह भड़भड़वा गाँव के जमींदार हैं। उनका गोड़इत हरेक साल मालगुजारी दे जाता था, मुन्शीजी ने कहा—मगर दो साल से नहीं आया।" और जमाबन्दी देख, हिसाब जोड़ने लगे। कागज से दृष्टि हटाकर बोल उठे—"निकालिए तेइस रुपये नव आने।"

युवक चौंक पड़ा। बोला—"आपको दो ही साल की मालगुजारी लेनी है न?"

"मैं चार साल के लिए नहीं माँगता।" मुंशीजी के माथे पर बल पड़ गये। बोले—"हिसाब देख लीजिए...."

मुंशीजी ने कागज की ओर देखने का संकेत किया।

युवक ने उसे पढ़ा :—

मालगुजारी सन् ५९	६)
सूद	॥-)
मालगुजारी सन् ६०	६)
सलामी मालिक	२)
पटवारी	२)
खिदमतगार	१)
कुल जोड़	२३॥-)

वह हक्का-बक्का मुंशी जी का मुँह निहारने लगा। मुंशी जी बोल उठे—"मुँह क्या देख रहे हैं। निकालिए रुपये।"

युवक ने मन का भाव छिपाते हुए पूछा—"मुंशीजी, सलामी के लिए नया कानून बना है क्या ?"

"इसके लिए कानून की जरूरत नहीं।" मुंशी जी के कान खड़े हुए। बोले—"आसामी चुपचाप टेंट से रुपये निकाल कर रख देते हैं।"

"मैं तो सूद के साथ मालगुजारी के रुपये ही दूँगा...."

"वह भी मत दीजिए।" मूरतसिंह ने आँखें तरेर कर कहा—"मैं मेरखूनमहरा के खलिहान से आपके हिस्से का धान मँगवा लूँगा।"

"यह तो सरासर जुल्म है।" युवक गम्भीर हो गया।

"और आप जो सलामी के रुपये हजम करना चाहते हैं, वह न्याय है न ?"—मूरतसिंह ओंठ चबाने लगे।

"सलामी के रुपये के लिए ही तो पटवारी मालिक की खिदमत करता है ..." मुंशी जी नरम हो गये।

"और उसी रुपये के लिए तो नौकर मालिक के पाँव दबाया करता है...." ढुनढुनवा उत्साह से मूरतसिंह के पाँव दबाने लगा।

"गोड़इत आता था तो जिरह नहीं करता था।" मूरतसिंह ने आँखें दिखलाते हुए कहा—"आप तो बैरिस्टर के कान काट रहे हैं...."

"गोड़इत से पिछली बार आपने तीन रुपये अधिक, जबरन ले लिया था...." युवक का क्षोभ भरा स्वर था।

"मैंने डाका डाला था....कहिए....क्या कहते हैं ?"

मूरतसिंह अंगारों पर लोटने लगे।

"गड़े मुर्दे को उखाड़ने से क्या लाभ !" मुंशी जी बोले—"आप

दो-चार आने कम ही दे दीजिए। मैं ही घाटा सह लूँगा। झगड़ा मुझे पसन्द नहीं।"

"आप पड़ोस के गाँवों में जाकर देख आइए—वहाँ किस तरह मालगुजारी वसूल की जाती है।" भूरतसिंह उबल पड़े—"आपकी छाती ठंढी हो जायगी।"

"वहाँ की बात मत चलाइए सरकार।" मुंशी जी उमंग से भर गये। बोले—"वहाँ के एक जमींदार चिराग हुसेन हैं। बेचारे मालगुजारी वसूलने के लिए निकलते हैं तो बेटे-नातियों को भी साथ ले लेते हैं और प्रत्येक आसामी से सबके लिए अलग-अलग सलामी वसूल करते हैं। अगर किसी ने उनके खिलाफ जुबान हिला दी तो मारे जूतों के सर के बाल उड़वा देते हैं...."

"वैसा अँधेर सभी जगह नहीं है।" युवक ने कहा—"और अब तो जमाना भी बदल गया। अँगरेजों की हुकूमत चली गई, अब जनता की सरकार है। कितने जमींदार ऐसे भी हैं जिन्हें मालगुजारी वसूलने में नाकों चना चबाना पड़ता है। नालिश करने पर एक का लकड़ी नब्बे खर्च करना पड़ता है...."

"वैसे जमींदारों को मुर्दा कहना चाहिए।" मूरतसिंह ने मूँछों पर ताव देते हुए कहा—"जमींदार वह जिसका एक पाँव जेल ही में रहे...."

"लाख रुपये की बात है सरकार—जमीन जोरू जोर के, जोर घटे तो और के...." टुनटुनवा ने दाँत निपोर दिये। बोला—"सीधी उँगली से घी नहीं निकलता।"

"बची-खुची जमींदारियाँ भी सरकार ले लेती तो गरीबों का बड़ा उपकार हो जाता...." युवक के मुँह से निकल गया।

"उससे आपको क्या लाभ!" मुन्शीजी सँभलकर बैठ गये—

"जहाँ-जहाँ की जमींदारियाँ सरकार ने छीन ली हैं, वहाँ गरीबों को कौन-सा स्वर्ग मिल गया है ?...."

"....वहाँ खजूर से गिरा तो बबूल पर अँटका वाली कहावत चरितार्थ हो रही है। खैर, उससे हमें क्या मतलब !" मूरतसिंह ने ऊबकर कहा—"मुन्शीजी, आप मालगुजारी लीजिए और अपना काम देखिए...."

मुन्शीजी युवक की ओर मुखातिब हुए। पूछ बैठे—"आपने अब तक अपना नाम नहीं बताया।"

"मेरा नाम हिमालय प्रसाद है।"

"भड़भड़वा गाँव के मालिक ?" मुन्शीजी ने अचरज और प्रसन्नता प्रकट करते हुए हिमालय प्रसाद को सलाम किया। टुनटुनवा से बोले—"आज हमारे भाग्य जग गये टुनटुनवा, जो मालिक ने दर्शन दिया। दस रुपये मिठाइयाँ खाने के लिए लूँगा।"

"और मैं पाँच रुपये से कम न लूँगा।" टुनटुनवा ने हिमालय प्रसाद के पाँव पकड़ लिये।

हिमालय प्रसाद को लजाकर जेब में हाथ डालना ही पड़ा।

रोजा बख्शाने गये नमाज गले पड़ी।

जिसकी लाठी उसकी भैंस

गुलगुल तोशक पर लेटे हुए बाबू मूरतसिंह कबूतरी की राह देख रहे हैं। आज उन्होंने सुरा-भवानी की पूजा मन लगाकर की है। भवानी बहुत खुश हैं। जादू मूरतसिंह के सर पर चढ़कर बोल रहा है।

करवट बदलते हुए मूरतसिंह ने तोशक पर एक मुक्का लगाया। बोले—"अभी तक ढुनढुनवा नहीं आया। आते ही दो एक लगाऊँगा।"

"सरकार!" ढुनढुनवा ने कमरे में प्रवेश किया।

"गधे! आ गया? इधर तो आ, छठी का दूध याद करा दूँ...."

मूरतसिंह ने लेटे लेटे ही एक पाँव पटका।

"धर्मावतार, सारे गाँव में चिराग लेकर खोजता रहा, मगर कबूतरी की परछाईं भी नहीं मिली।" ढुनढुनवा गिड़गिड़ा उठा—"इलइचिया से पता लगा, वह सुबह ही से लापता है।"

"जाने दे हरामजादी को, उसमें क्या लाल जड़े हैं! किसी और को पकड़ ला! आम खाने से मतलब है, पेड़ गिनने से नहीं...."

"दरवाजे पर शेरमारखाँ खड़े हैं।" ढुनढुनवा ने दबी जबान से कहा। मूरतसिंह के कान खड़े हुए। बोल उठे—"भेज दे!"

ढुनढुनवा जानता है, शेरमारखाँ के आते ही मूरतसिंह उसे किसी-न-किसी बहाने गाँव में भेज देते हैं। इसलिए शेरमारखाँ के पहुँचते ही उसने कहा—"सरकार, हुक्म मिलता तो मैं नदी की ओर...."

और वाक्य समाप्त होने के पूर्व ही मूरतसिंह बोल उठे—"जा,

जा और इलायची के दाने खा। मेरे लिए भी कहीं से लवंग लिये आना साले।"

टुनटुनवा अपने रसिक मालिक की बातों से मुस्कुराता हुआ चला गया। मूरतसिंह की नजर शेरमारखाँ के मुख पर पड़ी। मन्द स्वर में पूछ बैठे—

"बन्दूक चाहिए न?"

"जी नहीं।" शेरमारखाँ ने उत्तर दिया।

"तो डाके में बगैर बन्दूक के जाइएगा?"

"आज डाका नहीं डालना है।"

"तब रात को...." मूरतसिंह विस्मय से भर गये।

"आना निहायत जरूरी था...."

"यह तो मैं भी समझता हूँ।"

"हुजूर, डकैती की तहकीकात में एस० पी० आये थे।" खाँ ने कहा—"वहाँ एक औरत पहुँची और रो-रोकर कहने लगी, मेरे गाँव के जमींदार बाबू मूरतसिंह ने मेरे शौहर को डकैती में फँसा दिया है। मेरा शौहर बेकसूर है...."

मूरतसिंह के कान खड़े हुए—"वह कबूतरी होगी। वह तो नागिन निकली। खैर, उसके बाद क्या हुआ?"

"एक सिपाही ने दारोगा के हुक्म से उसे अलग हटा दिया और उसके लाख सिर धुनने पर भी कान नहीं दिया।" खाँ ने कहा—"दारोगा ने एस० पी० से कहा—हुजूर, वह पगली है।"

"हैं....हैं....हैं....हैं...." मूरतसिंह हँस पड़े। हँसते हुए बोले—"चींटी के पर निकल आये...."

"और मेढकी को जुकाम हो गया।" खाँ भी हँसी रोक न सके।

"वह डाल-डाल तो हम पात-पात।" मूरतसिंह मन-ही-मन कोई भयानक संकल्प कर बैठे। बोले—"कौए के पर कुतर डालूँगा...."

"न रहे बाँस न बजेगी बाँसुरी।"—खाँ ने दही पर चीनी डाली।

"औरत पर भरोसा नहीं करना चाहिए।"

"एकदम नहीं।"

"मारिये गोली उस कुलटा को।" मूरतसिंह कल्पना-लोक से लौट आये। बोले—"आप पर तो कोई आँच नहीं आई?"

"आपकी दुआ से जाल में फँसकर भी निकल आया।" खाँ ने कहा—"हाँ, भुटेलिया साले के कारण पाँच सौ रुपये कुर्बान करने पड़े।"

"चलिए छुट्टी हुई। जान बची तो लाखों पाये।"—मूरतसिंह ने हर्षावेग में एक मुक्का तोशक पर मारा।

"लखना और मखना को कुछ दिनों तक नेपाल राज्य में जमे रहने के लिए कह दिया है।"—खाँ ने कहा—"पुलिस उनके पीछे हाथ धोकर पड़ी है।"

"आपकी अक्लमन्दी का जवाब नहीं।"

"एक और बात है सरकार...."

"सौ बात सुनने के लिए तैयार हूँ, मगर इतना ख्याल रहे, वह नीरस न हो।" मूरतसिंह मुस्कुरा पड़े।

"उसमें फायदा-ही-फायदा है।"

"तो झट मुँह से उगलिए!"

"कोदो महतो को आप जानते हैं...."

"भला उसे इस इलाके में कौन नहीं जानता!" मूरतसिंह बोल उठे—"अक्ल के पीछे लाठी लिये फिरता है।"

"तो मडुआ महतो को भी आप जानते ही होंगे...."

"कहिए न, उस अक्ल के दुश्मन को भी अच्छी तरह जानता हूँ। दोनों भाई अड़ियल टट्टू हैं। वर्षों से मूँछ की लड़ाई लड़ रहे हैं।

मुकद्दमे में सारा धन फूँक बैठे, मगर आँखें नहीं खुलीं। राम ने क्या जोड़ी मिलाई है....''

''मड़ुआ महतो ने बाजी मार ली।''

''क्या मुकद्दमे में उसकी जीत हो गई?'' मूरतसिंह चौंक उठे।

''जी हाँ।''

''वाह! रसगुल्ले से भी मजेदार खबर है।'' मूरतसिंह उठ कर बैठ गये। बोले—''अब तो महाभारत होकर रहेगा।''

''उसमें कोई देर नहीं।'' खाँ ने कहा—''मड़ुआ महतो जल्द ही खरपुरवा पर चढ़ाई करेगा।''

''गज भर नहीं देना और थान से हाथ धो बैठना—इसे ही कहते हैं।''

''मगर सरकार, अभी दिल्ली दूर है।'' खाँ ने मुँह खोला—''कोदो महतो के हाथ में भी लठैत हैं। उसे खरपुरवा से भगाने में मड़ुआ महतो को लोहे के चने चबाने पड़ेंगे।''

''बेशक।'' मूरतसिंह बोल उठे—''कोदो महतो को ईंट का जवाब पत्थर से नहीं मिला तो मड़ुआ महतो को अदालत की डिग्री पर नीबू-नमक रख कर चाटना पड़ेगा।''

''अगर हुजूर मड़ुआ महतो की सहायता के लिए बीड़ा उठा लें, तो ऐसा नहीं हो सकता।'' खाँ ने आवेश में कहा—''कोदो महतो को मुँह की खानी ही पड़ेगी।''

''मुझे क्या पड़ी है, जो झगड़ा खरीदूँ?'' मूरतसिंह गंभीर हो गये।

''सरकार....'' खाँ कहते-कहते चुप हो गये।

''छोड़िए, मुझे किसी की वकालत पसन्द नहीं।''

''सुन तो लीजिए।''

''नहीं, मैं जान-बूझकर, अंगारों पर पैर न रखूँगा।''

''आपके लिए तो गुड़ियों का खेल है।''

"क्यों व्यर्थ में मुझे काँटों में घसीट रहे हैं ?"

"मुँह न मोड़िए सरकार, गुड़ गोबर हो जायगा।"

"मुझे उसकी चिन्ता नहीं।"

"मैं जुबान दे चुका हूँ हुजूर।" खाँ ने आजिजी से कहा—"मेरी पगड़ी बचाइए।"

"आप क्या चाहते हैं ?" मूरतसिंह उबल पड़े।

"मैं यही चाहता हूँ कि मेरी बात रह जाय।"

"मुझे क्या लाभ होगा ?"

"मड़ुआ महतो दस बीघे आपके नाम से लिख देंगे।"

"आपको क्या मिलेगा ?" मूरतसिंह नरम हो गये।

"मुझे भी दस बीघे ही मिलेंगे।" खाँ ने उत्साह से कहा—"हमारे लिए यह सौदा फायदेमन्द है।"

"भला वह कैसे ?"

"एक रुपया में एक आदमी मरने-मारने पर उतारू होता है। इस हिसाब से चार सौ आदमियों पर केवल चार सौ खर्च होंगे।"

"उन लठैतों के भोजन पर क्या कुछ खर्च न होगा ? मूरतसिंह ने कहा—"कहीं किसी की खोपड़ी टूट गई या धड़ से सर ही अलग हो गया तो उसके लिए भी टेंट टटोलनी पड़ेगी।"

"अधिक से अधिक हजार रुपये का खर्च होगा और बिना हाथ-पाँव हिलाये बीस हजार की जायदाद हाथ लग जायगी।"—खाँ ने अनुरोध भरे स्वर में कहा—"मेरी राय है, आप इस सौदे को मंजूर कर लें। हमें तो कांदो महतो को भगाकर, खरपुरवा पर मड़ुआ महतो को कब्जा दिला देना है...."

"आप हठ करते हैं तो मैंने मंजूर किया...."

"सरकार की जय हो।" खाँ बाग-बाग हो गये।

आग लगा के जमालो दूर खड़ी

टुनटुनवा उमंगों से खेलता इलइचिया के घर की ओर जा रहा था। अचानक उसके पाँव रुक गये। उसकी नजर इलइचिया पर पड़ी। वह कहीं जा रही थी। उसके पाँव जल्दी-जल्दी उठ रहे थे।

टुनटुनवा के मन में सन्देह के भूत ने सर उठाया—वह लोटासिंहवा से तो मिलने नहीं जा रही है? काश, ऐसा ही होता! वह इलइचिया की नजरों से बचता, उसका पीछा करने लगा।

मूरतसिंह की फुलवारी के पास उसने एक मुसटण्डे आदमी को देखा। चाँदनी ने उसकी सहायता की। उसे पहचानने में देर न लगी। वह और कोई नहीं, पहलवान लोटासिंह था।

टुनटुनवा एक पेड़ की ओट में छिप गया।

इलइचिया बेखबर थी। वह अपनी धुन में बढ़ी जा रही थी। लोटासिंह आगे बढ़ा। उसने दोनों हाथों से उसे ऊपर उठा लिया। टुनटुनवा ने कलेजा थाम लिया....

और वे दोनों पास ही की एक झोंपड़ी में अन्तर्धान हो गये।

टुनटुनवा क्या करता, ओंठ चबाकर रह गया।

क्षण भर बाद टुनटुनवा किसी निश्चय की चोटी पर पहुँचा और बड़ी तेजी के साथ पीछे की ओर लौट पड़ा।

"मोटरा है रे!" कहते हुए वह इलइचिया के घर में घुस पड़ा।

"कौन है?" मोटरा चारपाई पर से उठ खड़ा हुआ।

"आँखों पर चर्बी छा गई है? पहचानता नहीं। ढिबरी के पास मुझे जाना पड़ेगा?...."

और मोटरा उसे पहचान गया। उसके माथे पर बल पड़ गये। शेर की-सी आँखों से घूरता हुआ बोल उठा—"कहो, क्या है?"

"तबियत ठीक है न?"

"ठीक तो है...."

"फिर चारपाई पर बीमार की तरह क्यों पड़े हो?" टुनटुनवा ने व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा—"अपने पहलवान के पाँव दबाने आज क्यों नहीं गये?...."

"मैं किसी के पाँव दबाऊँगा चाहे दाँत तोड़ूँगा, तुम्हें उससे मतलब क्या?" मोटरा चिढ़कर बोला—"पूछे न आछे मैं दुलहिन की चाची।"

"आँखें कपाल पर मत चढ़ा। मैं तेरा दुश्मन नहीं, बल्कि दोस्त हूँ। आँखें खोल और मुझे पहचान ले।"

"गाल मत बजाओ। अपना रास्ता नापो।"

"अक्ल चरने गई है क्या? क्या मैं तेरे घर में बसने आया हूँ? या तू देवता है, जो तेरे दर्शन के लिए चला आया...." टुनटुनवा आवेश में भर गया। बोला—"क्या यह भी नहीं पूछोगे कि यहाँ मैं किसलिए रात में आ पहुँचा?"

"मुझे खूब मालूम है कि मेरी गैर मौजूदगी में तुम यहाँ किसलिए आया करते हो।" मोटरा तिलमिला उठा। बोला—"क्रोध की आग में घी मत डालो। भला चाहते हो तो रास्ता नापो।"

"भले आदमी, तुझे कुछ नहीं मालूम। धोखे में है। किसी ने कान फूँक दिये होंगे।" टुनटुनवा ने कहा—"उस चुगलखोर ने कहा होगा, टुनटुनवा तेरी जोरू को फुसलाने या बहकाने आता है, मगर ईश्वर गवाह है, मेरे दिल में तनिक भी मैल नहीं।"

"बस, रहने दो। मुझे चकमा मत दो।" मोटरा अंगारों पर

लोटता हुआ बोला—"तेरे दिल की सचाई का पता मुझे लग चुका है। तू चिकने मुँह का ठग है।"

"तू चाँद पर थूक रहा है। मैं तो तेरा सच्चा दोस्त हूँ।"

"आँखों में धूल मत डालो।" मोटरा बोल उठा—"तेरे मुँह में राम और बगल में छूरी है।"

"ठीक है। पहले गालियों का खज़ाना खाली कर लो।"—टुनटुनवा हँस पड़ा। बोला—"भैंस के आगे बीन बजावे, भैंस रही पगुराय...."

"तुम्हारी हँसी कलेजे में तीर की तरह लगती है।" मोटर आपे से बाहर हो गया—"भला चाहते हो तो आँखों से दूर हो जाओ।"

"तेरा कसूर नहीं मोटरा।" टुनटुनवा गंभीर हो गया। बोला—"साले चुगलखोरों ने कान फूँक कर तेरा दिमाग खराब कर दिया है। तुम दोस्त को दुश्मन और शत्रु को मित्र समझ रहे हो।"

"उसने खुद मुझसे कहा था कि टुनटुनवा की गरदन धड़ से अलग कर दो, वह मुझे बहुत तंग करता है...."

"इलइचिया ने कहा था न?"

"हाँ।"

"तुझे उसकी बातों पर विश्वास हो गया? बड़ा भोला है तू।"—टुनटुनवा ने खाँसते हुए कहा—"जब मैं इधर से निकलता था तो इलइचिया को पुकार कर चुपके से कहा करता था—इलइचिया, बुरे रास्ते की ओर कदम मत बढ़ा, गाँव में तेरे मरद की बदनामी फैल रही है...." मगर मेरे उपदेश के बदले वह जली-कटी सुनाया करती थी, धमकियाँ देने से भी बाज न आती थी। वह कहती थी, मैं पहलवान लोटासिंह से कहकर, तुझे छठी का दूध याद करवा दूँगी...."

"लोटासिंह से उसे क्या मतलब?"

मोटरा के सिर पर सन्देह का भूत चढ़ बैठा।

"मैं जुबान न खोलूँगा।" टुनटुनवा ने कहा—"तू खुद अपनी आँखों से यह कौतुक देखकर समझ ले कि तेरी नजरें बचा कर कैसा गुल खिलाया जाता है।"

मोटरा का मुँह बन्द हो गया। टुनटुनवा पूछ बैठा—"कहाँ गई है इलइचिया?"

"वह डोलडाल के लिए नदी की ओर गई है।"

"ठीक है। अभी तुझे पता लग जायगा....आ मेरे साथ।"

और टुनटुनवा के पीछे-पीछे मोटरा चल पड़ा।

वे दोनों मूरतसिंह की फुलवारी में पहुँचे। पेड़ों की छाया में छिपते हुए वे झोंपड़ी के पास गये। दबे पाँव आगे बढ़े और टाटी से कान लगा दिये।

लोटासिंह और इलइचिया अपनी धुन में मस्त थे। उन्हें क्या पता कि उनके नाटक का परदा उठ रहा है....

"अब मुझे जाने दीजिए खलीफा!...." इलइचिया बोल उठी।

"अरे, ठहर भी। जल्दी क्या है। कहीं आग तो लगी नहीं।" खलीफा ने कहा—"कई दिनों के बाद हाथ लगी हो।"

"देर होने से वे शक करेंगे...."

"धुत्! शक करके वह क्या करेगा! वह तो पूरा गोबर-गणेश है।"

"ठीक कहते हैं, मगर भंडा फूटने पर चिल-पों मचाने का डर लगा रहता है। गाँव में बदनामी फैल जायगी।"

"डरना बेकार है। जब नाचना तो घूँघट क्या!"—लोटासिंह ने गंभीर स्वर में कहा—"मोटरा उँगली भी उठाये तो मुझसे कहना, मैं लात और मुक्कों से उसके दाँत खट्टे कर दूँगा।"

"खलीफा...."

"बोलो न। कहते-कहते चुप क्यों हो गई?"

"हम कहीं दूर निकल चलें...."

"नहीं, अभी उसकी जरूरत नहीं...."

और क्रोधावेश में मोटरा को मुट्ठी बाँधते देख टुनटुनवा के कान खड़े हो गये। उसने मोटरा को शान्त रहने का संकेत किया और उसकी कलाई पकड़ फुलवारी के बाहर ले गया।

"बूता दिखाने का मौका नहीं है।" टुनटुनवा ने मन्द स्वर में कहा—"बना बनाया काम चौपट हो जायगा। लोटासिंह के शरीर में राक्षस का बल है। भेद खुलते ही वह हम दोनों का काम तमाम कर देगा। शोर मचाने से तेरी इज्जत में धब्बा भी तो लगेगा।"

"जी चाहता है, खलीफा का गला काट डालूँ।" मोटरा ने दाँत किटकिटाये। बोला—"न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसुरी।"

"नेक विचार है। राह का काँटा साफ हो जायगा। हाँ, सब्र से काम लेना चाहिए।"—टुनटुनवा उसे गाँव की ओर खींच ले चला।

"छाती पर साँप लोट रहा है...."

"उस पर पत्थर रख ले।" टुनटुनवा बोल उठा—"और खलीफा का दोस्त बना रह। उसकी सेवा मन लगाकर किया कर। एक रात जब तेलमालिश के बाद वह खर्राटे लेने....बस, उसे स्वर्गलोक भेज दे।"

"बहुत ठीक।" मोटरा ने कहा—"किसी को सन्देह न होगा कि यह करतूत मेरी ही है। साँप मर जायेगा और लाठी भी न टूटेगी।"

"इलाइचिया पर मन का गुबार मत निकालना।" टुनटुनवा ने चेतावनी दी। बोला—"भेद खुल गया तो तुझे फाँसी पर लटकना पड़ेगा।"

"मैं उस छिनाल की नाक काट लेता, मगर तुम कहते हो तो...."

"अरे, ऐसा मत कर बैठना। लोटासिंह सचेत हो जायगा...."

"ठीक है। मैं मन में चोर रखकर ही बातें करूँगा।"

मोटरा अपने घर की ओर बढ़ा और टुनटुनवा अपने स्वामी की हवेली की ओर। टुनटुनवा की बाँछें खिल रही थीं। वह मन-ही मन पकौड़ियाँ बना रहा था। अचानक उसका ध्यान टूट गया। हवेली के सामने शेरमारखाँ से साक्षात्कार हो गया। वह बोल उठा—"खाँ साहब, चले कहाँ?...."

"घर जा रहा हूँ।" खाँ ने उत्तर दिया।

"राह में डाकुओं का बहुत डर है। रुक जाइए, सुबह चले जाइएगा।"

शेरमार खाँ मुस्कुरा पड़े—"डाकू मेरा क्या बिगाड़ेंगे!...."

"टुनटुनवा!" तभी मूरतसिंह पुकार उठे।

"हाजिर हुआ धर्मावतार।"—वह लपकता हुआ मूरतसिंह की खिदमत में उपस्थित हुआ।

"गाँजा रगड़।" उसे मूरतसिंह की ओर से आदेश मिला।

"बहुत अच्छा सरकार...."

दम लगाने के बाद मूरतसिंह बोल उठे—"बड़ा आनन्द मिलेगा रे!"

टुनटुनवा ने अर्थपूर्ण दृष्टि मूरतसिंह के मुख पर डाली।

"मेढ़ों की लड़ाई तूने देखी है?"

"कई बार सरकार।" टुनटुनवा ने कहा—"बड़ा मजा मिलता है। दो आदमी दो ओर अपने-अपने मेढ़े को पकड़े रहते हैं और एक दूसरे पर हमला करने के लिए, उन्हें एक साथ ही छोड़ते हैं। मेढ़े आँख मूँदकर दौड़ पड़ते हैं। सींग से सींग टकराते हैं और 'ठक्' की आवाज होती है...."

"अगर आदमी से आदमी लड़े तो कैसा रहे?"

मूरतसिंह मूँछों पर ताव देने लगे।

"कुछ न पूछिए सरकार !" ढुनढुनवा बोल उठा—"बायस्कोप का तमाशा भी फेल हो जायगा।"

"वह तमाशा तुझे जल्द ही दिखलाऊँगा।"

"कैसा तमाशा सरकार ?" ढुनढुनवा के कान खड़े हुए।

"कुछ लोग भाले-गँड़ासे और लाठियाँ पकड़े एक ओर खड़े होंगे, कुछ लोग दूसरी ओर। जय हनुमान, जय काली या अली-अली की आवाजें गूँज उठेंगी और वे लोग भूखे भेड़िए की तरह एक-दूसरे पर टूट पड़ेंगे। किसी की टाँग टूटेगी, किसी का हाथ कटेगा और किसी की खोपड़ी हाँडी की तरह फूट जायेगी....हा....हा....हा...."

"मेरे धन्य भाग्य !" ढुनढुनवा उनके पाँवों पर अपना बल आजमाने लगा।

"ढुनढुनवा !" मूरतसिंह चौंक पड़े—"कबूतरी के पेट में दाढ़ी जम गई। उसने एस० पी० से मेरे खिलाफ चुगली खायी...."

"हुक्म हो तो झोंटा पकड़कर उसे दो-चार लात जमा आऊँ।"—ढुनढुनवा ओंठ चबाने लगा।

"नहीं, उसकी जरूरत नहीं।" मूरतसिंह ने कहा—"तू लोटा-सिंह को मेरा हुक्म सुना दे, वह रात भर में भूखला के खलिहान से उसके कुल बोझे उठवाकर अपने खलिहान में रखवा ले और होशियार रहे कोई मेरे खिलाफ सर उठाने न पाये...."

"किसकी जान फालतू है, जो सरकार से लोहा लेगा।—" ढुनढुनवा उठ खड़ा हुआ। बोला—"कबूतरी ने अपने पाँव में आप कुल्हाड़ी मारी। चींटी के पर निकल आये...."

"जैसी नीयत वैसी बरक्कत।" मूरतसिंह ने कहा—"मुझसे हरामजादी दुश्मनी मोल लेने चली थी। ऊँट बहे और गदहा पूछे कितना पानी...."

"भूखला तो जेल गया ही, उसकी साल भर की कमाई भी चली

जायगी।" ढुनढुनवा बोला—"बैल का बैल गया नौ हाथ का पगहा भी गया।"

"साली कबूतरी न घर की रहेगी और न घाट की। कल ही मुंशी को, भूखला पर पाँच सौ रुपये की नालिश करने के लिए कचहरी भेजूँगा।"

"बहुत ऊँचा ख्याल है धर्मावतार का।"

और ढुनढुनवा का वाक्य समाप्त होते होते सूरतसिंह उबल पड़े—"साला खड़े-खड़े बातें बनाता है। मारूँगा चार जूते...."

"सरकार, दो घंटे में भूखला का खलिहान खाली करा दूँगा।"

ढुनढुनवा रफूचक्कर हो गया।

आधा तीतर आधा बटेर

"उधर कहाँ चली ?"

"बड़े हाकिम से मिलना है।"

"भाग यहाँ से। हाकिम नाश्ता कर रहे हैं।"

"नहीं, उनसे मिले बगैर मैं न जाऊँगी।"

"खबरदार...."

एस० पी० खलीफासिंह चाय सुड़क रहे थे। दारोगा इस्लाम-हुसेन बड़ी मुस्तैदी से उनके स्वागत में जुटे हुए थे। वे लोग कुछ देर पहले ही तहकीकात करके लौटे थे।

"बाहर कैसा शोर है ?" खलीफासिंह के कान खड़े हुए। उनके कानों में सिपाही की फटकार और एक औरत की करुणा भरी पुकार पड़ी थी !

दारोगा बड़ी तत्परता से दरवाजे के पास गये और तत्क्षण लौट कर बोले—"हुजूर, वह पगली है।"

"वह तो नहीं, जो मूसराम के दरवाजे पर दीख पड़ी थी ?"—खलीफासिंह उत्सुक हो पूछ बैठे।

"वही है हुजूर। उसका दिमाग ठिकाने नहीं है।"

"वह क्या चाहती है ?"

"हुजूर, जिसकी अक्ल चरने चली जाती है, वह तो यही चाहता है—किसी को दाँत से काट खायँ, किसी की नाक ही मुँह से गायब कर दें, किसी की खोपड़ी पर ईंट के टुकड़े बरसा दें...."

दारोगा की अर्थपूर्ण दृष्टि पड़ी खलीफासिंह पर।

तभी औरत चिल्ला उठी—"चाहे शरीर से जान निकाल लो, मगर हाकिम से दुखड़ा सुनाये बगैर मैं न जाऊँगी, न जाऊँगी।"

खलीफासिंह के माथे पर विचारों की रेखाएँ उभर आईं। उन्होंने संयत स्वर में कहा—"इस्लाम साहब, आप उस औरत को मेरे सामने हाजिर करें!"

एस० पी० की मुखाकृति देख दारोगा ने विरोध में मुँह खोलना उचित न समझा। वह मुँह लटकाए बाहर निकले।

और कुछ देर बाद ही वह औरत एस० पी० के सामने पहुँचा दी गई। उसकी आँखों में आँसू हैं।

खलीफासिंह ने उसे सर से पाँव तक घूरते हुए कहा—"तू पगली है न?"

"नहीं, धर्मावतार!" औरत बोल उठी।

"फिर क्यों आकाश-पाताल एक कर रही थी?"

"सरकार, मैं गाय-गुहार लेकर आई हूँ...." औरत ने कहा—"सिपाही राह रोकते हैं। मुँह पर तमाचे भी खाने पड़ते...."

खलीफासिंह ने रोषपूर्ण नजर दारोगा पर डाली।

दारोगा सिटपिटा गये।

"क्या नाम है तेरा?" खलीफासिंह औरत की ओर मुखातिब हुए।

"सरकार, कबूतरी।"

"कहाँ घर है?"

"कोंहड़ापुर।"

"तुझे क्या कहना है?"

"धर्मावतार, मेरे मालिक को गाँव के जमींदार डकैती में फँसा चुके हैं। वह बेकसूर हैं।" कबूतरी रो पड़ी। रोते-रोते बोली—

"मैं लुट जाऊँगी....दाने-दाने के लिए मुझे दूसरे का मुँह देखना होगा...."

"तेरे पति का नाम ?"

"सरकार, मैं अपनी जुबान से उनका नाम कैसे लूँ ?"

खलीफासिंह इस्लामहुसेन से पूछ बैठे—"आपको मालूम है ?"

"जी नहीं।" इस्लाहुसेन ने सिर हिलाया।

और डकैती के सिलसिले में गिरफ्तार व्यक्तियों के नाम ले-ले कर वह कबूतरी से उसके पति के नाम का पता लगाने लगे। भूखला का नाम जैसे ही उसके मुँह से निकला, कबूतरी बोल उठी—"बस, यही नाम है मेरे मालिक का...."

उसे घर लौट जाने का आदेश दे, एस० पी० खलीफासिंह, दारोगा इस्लामहुसेन से भूखला के बारे में पूछ-ताछ करने लगे। कबूतरी के आँसुओं ने उनके दिल पर गहरा असर जमा लिया था। उसकी निश्छल मुखाकृति और इस्लामहुसेन की बातों से उनके मस्तिष्क में शंका ने सर उठाया था।

सूरज डूबने में घंटे भर की देर थी। खलीफासिंह कोंहड़ापुर की सीमा में प्रवेश करते हुए दिखाई पड़े। वे सादी पोशाक में और साइकिल पर सवार थे।

दो ग्रामीण नशे में चूर कोंहड़ापुर की ओर जा रहे थे।

खलीफासिंह उनके पास पहुँचते ही साइकिल से उतर पड़े।

"सामने कौन गाँव है ?" खलीफासिंह पूछ बैठे।

ग्रामीणों ने उन्हें घूर कर देखा। एक ने कहा—"कोंहड़ापुर।"

दूसरे ने पूछा—"कहाँ जाना है आपको ?"

"कोंहड़ापुर ही में।" खलीफासिंह बोले—"कबूतरी को आप लोग जानते हैं ?"

एक दूसरे की ओर अर्थपूर्ण दृष्टि डाल वे दोनों मुस्करा पड़े।

"क्यों, बात क्या है ?" खलीफासिंह की उत्सुकता बढ़ी।

"आपको उससे क्या काम है ?" एक पूछ बैठा।

"तुम तो बेवकूफ की तरह सवाल करते हो गेनवा !"—दूसरा बोल उठा—"चिराग से फतिंगे को क्या काम रहता है ?...."

"समझ गया झींगुर भाई।" गेनवा ने खलीफासिंह की ओर देखकर व्यंग्यपूर्ण स्वर में कहा—"किसी के तालू में दाँत जम गये हैं जो...."

और उसने झींगुर की आँखों में आँखें डाल, आँख मारी।

झींगुर खलीफासिंह की ओर मुखातिब हुआ। आवेश भरे स्वर में कहा—"अपना भला चाहते हैं तो चम्पत हो जाइए। बाबू मूरत-सिंह के कानों में किसी ने बात डाल दी तो आपको आटे-दाल का भाव मालूम हो जायगा।"

"झींगुर भाई, भूखला की क्या हालत हुई।" गेनवा ने मुँह खोला—"उसने बाबू मूरतसिंह के पास उसे जाने से रोका और बाबू साहब ने चोरी का इलजाम उसके सर थोपकर बड़े घर भेजवा दिया।"

"चोरी का इलजाम ?" झींगुर उसकी अज्ञानता पर हँस पड़ा। बोला—"तब तुम्हें मालूम नहीं। उस पर डकैती का इलजाम लगाया गया है। बाबू साहब के रास्ते का काँटा दूर हो गया। सात-आठ साल तक भूखला जेल में चक्की चलाता रहेगा।"

"चलो उसके हक में अच्छा ही हुआ।" गेनवा ने कहा—"सात आठ साल तक भोजन की चिन्ता से उसे छुटकारा तो मिला।"

"और कबूतरी का क्या होगा ! उसके बैलों को कौन सानी खिलायेगा ? खेती कौन करेगा ?"

"झींगुर भाई, कबूतरी को गृहस्थी से क्या मतलब ! बाबू साहब बने रहें तो उसकी चाँदी कटती ही रहेगी।"

"सब दिन एक समान नहीं होता गेनवा।" झींगुर ने कहा—"राजा, साधू, अग्नि, जल का कोई भरोसा नहीं। चार दिन की चाँदनी फिर अँधेरी रात।"

"आपकी बातें मेरी समझ में नहीं आतीं।" खलीफासिंह ने मुँह खोलकर, अपना मौन तोड़ा।

"क्यों नहीं समझ में आतीं?"

"कबूतरी से बाबू मूरतसिंह को क्या सरोकार?"

झींगुर और गेनवा ठठाकर हँस पड़े। गेनवा ने कहा—"गाँव का हरेक बच्चा जानता है और आपको मालूम ही नहीं?...."

"मुझे नहीं मालूम। कहिए न, बात क्या है?"—खलीफासिंह की उत्सुकता बढ़ गई।

"कबूतरी बाबूसाहब की चहेती है। कुछ और सुनियेगा?"

और गेनवा मुँह बना कर गाने लगा—"मैं तो हुई बदनाम सँवरिया, तेरे लिए...."

"चुप रहो!" झींगुर ने उसे डाँटा। बोला—"मियाँ बीबी राजी तो क्या करेगा काजी...."

और वह खलीफासिंह की ओर मुड़ पड़ा। बोला—"आप भले-मानस जान पड़ते हैं। मेरी राय मानिए तो उलटे पाँव लौट जाइए। जानते नहीं? एक म्यान में दो तलवारें नहीं अँटतीं...."

"उस छिनाल से दूर रहना ही भला।" गेनवा से चुप न रहा गया। वह बोल उठा—"जो पति की न हुई, भला वह और किसकी होगी!"

"आप लोगों का हुक्म सर आँखों पर।"—मुस्कुराते हुए खलीफासिंह साइकिल पर सवार हो गये। वह थाने की ओर चले और गेनवा, झींगन गाँव की ओर।

"गेनवा, साले कलाल ने शराब में पानी मिला दिया था। रंग फीका लग रहा है...."

"सवा सोलह आने सच है झींगुर भाई।" गेनवा बोल उठा—"वह साला भी दिनोंदिन 'चार सौ बीस' बनता जा रहा है। सात दिन पहले मैंने आधी बोतल नेपाली दारू पी थी। तुम्हारे सर की कसम, तीन घंटे तक नालियों में पड़ा रहा...."

"अरे!....अब क्या होगा?" गेनवा के चेहरे पर हवाइयाँ उड़ने लगीं।

"क्या हुआ गेनवा?" झींगुर चौंक उठा।

"खदेरन काका आ रहे हैं...."

"उससे क्या हुआ!" झींगुर ने गेनवा के मुँह की बात छीन ली। बोल उठा—"वह क्या बाघ हैं जो हमें निगल जायँगे।"

"तुम समझते नहीं झींगुर भाई...."

"भला मैं नहीं समझता! मैं क्या तुम्हारी तरह घोंघाबसन्त हूँ?" झींगुर ने कहा—"तू डरता क्यों है?"

"झींगुर भाई!" गेनवा ने व्यग्र स्वर में कहा—"मैंने कान पकड़े थे कि दारू न पीऊँगा...."

"हा....हा....हा....हा...." हँस पड़ा झींगुर। बोला—"तू काठ का उल्लू है बे। क्यों न पीयेगा दारू भला?"

"चुप रहो...."

"क्यों चुप रहूँ?"

"खदेरन काका...."

"धुत्! तू गधा है।" झींगुर बोल उठा—"इस समय लाटसाहब भी सामने आ जायँ तो मैं उनकी परवाह न करूँगा।"

"तुम्हारे मुँह में तो लगाम नहीं...." गेनवा के मुँह से निकला।

और बोल उठे खदेरनराम—"गेनवा, तू फिर शराबखाने चला गया न...."

गेनवा सिटपिटा गया। झींगुर झुँझला उठा—"जवाब क्यों नहीं देता गेनवा? मुँह में क्या दही जम गया?"

"मैंने नहीं पी काका।" गेनवा ने मुँह खोला—"झींगुर भाई ने एक-दो चुक्कड़ पिला दी...."

"झूठ क्यों बोलता है रे?" झींगुर बोल उठा—"सीना फुलाकर क्यों नहीं कहता कि आज मैंने एक बोतल खाली की है...."

"बको मत!"—गेनवा की आँखें कपाल पर चढ़ गईं।

"मुझे आँखें दिखाता है?" झींगुर आवेश में भर गया। बोला—"मारे झाँपड़ों के गाल लाल कर दूँगा साले।"

"क्यों लड़ते हो?" खदेरनराम बोल उठे—"मेरी बात सुनो!"

"आपकी क्या सुनें?" झींगुर, खदेरनराम की ओर मुड़ पड़ा—"हम अपने पैसे से पीते हैं। आपकी छाती क्यों फटती है?"

"शराब बहुत बुरी चीज है।" खदेरनराम ने कहा।

"वह क्यों?" झींगुर बोला—"महुए, गुड़ और चावल का अर्क ही तो है?"

"उससे पैसे की बरबादी होती है...."

"हमें मक्खीचूस नहीं बनना है।" झींगुर के नथने फूल गये।

"मेहनत की कमाई शराबखोरी में उड़ा देना बेवकूफी है।" खदेरनराम का वाक्य समाप्त होते ही झींगुर ने आँखें तरेर कर कहा—"साफ क्यों नहीं कहते कि तुम लोग बेवकूफ हो?"

और वह गेनवा की ओर मुखातिब हुआ। बोला—"सुन रहे हो न? अक्ल का सारा खजाना खदेरनराम ही के पास है...."

खदेरनराम ने मुँह खोला—"तुम समझे नहीं...."

"समझूँ कैसे? अक्ल तो आपके पास है।"

"झींगुर !"

"बस, मुँह न खोलिए। हम अपना सत्तू जूते में सानकर खायेंगे—आपको क्या !"

और गेनवा की कलाई पकड़ झींगुर आगे बढ़ गया।

खदेरनराम अपना-सा मुँह लेकर रह गये।

काजी जी दुबले क्यों ?

"खदेरन भैया !"

"कौन है ?"

"मैं हूँ भौजी। भैया क्या घर में नहीं हैं ?"

"हँह....घर से उन्हें क्या मतलब !" खदेरनराम की पत्नी के मन का क्रोध फूट पड़ा—"उन्हें उपदेश देने से फ़ुरसत कहाँ!"

जीतू बनिया मुस्कुरा पड़ा। व्यंगात्मक स्वर में बोला—"काजी जी दुबले क्यों ?—गाँव की फिकर से।"

"भैया, तुमने मेरे मन की बात कह दी।" खदेरनराम की पत्नी ने कहा—"मैं समझाते-समझाते हार गई, मगर उनके कानों पर जूँ नहीं रेंगती। खेत बिक ही गया, अब लुटिया और थाली बेचने की बारी है।"

"भौजी, आज का जमाना चलते-पुर्जे का है।" जीतू बोला—"नाचे कूदे तोड़े तान ताके दुनिया राखे मान। खदेरन भैया जैसे सीधे आदमी के लिए कहीं जगह नहीं।"

"इसमें झूठ नहीं कि वह गोबर गणेश हैं।"

जीतू को उत्साह मिला। बोला—"स्वराज्य होने से कौन-सा सुख मिला ? बताओ न भौजी !"

"अपने भैया ही से पूछना।" खदेरनराम की पत्नी नाक से सितार बजाने लगी। बोली—"वह मेरे वश में नहीं। जब स्वराज्य नहीं मिला था तब थानेदार उनकी मरम्मत किया करता था, बड़े घर की खिचड़ी खाने का सुअवसर भी मिला था। और अब बाजरे की रोटी पर भी आफत है...."

"और क्या चाहिए ?" जीतू ठठाकर हँसा।

खदेरनराम की पत्नी को उनके चारों बच्चे घेर कर खड़े थे। रोटी का नाम सुनते ही वे विचलित हुए। एक लड़के ने अपनी माँ का आँचल खींचते हुए कहा—"माँ, मैं रोटी खाऊँगा।"

एक लड़की बोली—"मुझे भी रोटी...."

शेष दोनों छोटे बच्चे चिल्ला उठे—"माँ, लोती.....हमें भी लोती...."

पर खदेरनराम की पत्नी की एक डाँट ने उन्हें चुप करा दिया।

"मुझे तंग करने में ये लड़के अपने बाप से कम नहीं। रात-दिन इन्हें भूख ही सताती है। जहाँ किसी से दो बातें करने लगी—ये जोंक की तरह अगल-बगल चिपक जाते हैं।"

जीतू ने बच्चों पर उड़ती नजर डाली और बोल उठा—"भौजी, स्वराज्य मिलने से गरीबों की क्या भलाई हुई?...."

"भलाई तो दूर रहे—स्वराज्य गरीबों के लिए बला साबित हुआ?" खदेरनराम की पत्नी उबल पड़ी—"दिनोंदिन रोटियों के लाले पड़ते जा रहे हैं!"

"ऐसा कहो भौजी!" जीतू ने कहा—"स्वराज्य के सुख नये-नये टैक्सों का रूप धर कर जनता के सर पर टपक रहे हैं।"

तभी खदेरनराम मुँह लटकाये आ पहुँचे। बोले—"भाई जीतू, सरकार नया कदम उठाती है, जनता की भलाई के लिए ही। घबड़ाओ मत, जल्द ही काली रात बीत जायगी।"

"सो तो सच है खदेरन भैया, रात के बाद ही सबेरा आता है।" जीतू ने कहा—"हटाओ उस चर्चा को। मुझे इतनी फुरसत नहीं कि गप्पें लड़ाऊँ।"

"कैसे कष्ट किया?" खदेरनराम की उत्सुक दृष्टि जीतू के मुख पर पड़ी।

"यह भी कहना पड़ेगा?"

"मैं समझा नहीं...." खदेरनराम का मुँह लटक गया।

"बड़े भोले हो।" जीतू ने कहा—"मैं कर्ज की याद दिलाने चला आया था। तीस मन धान ले आये हो। औरों से तो ड्योढ़ा लिया करता हूँ, मगर तुम सवाई के हिसाब से ही चुका दो।"

"कुछ दिनों तक और धीरज रखो।" खदेरन राम बोल उठे—"राजनीतिक-पीड़ित सहायता-कोष से शीघ्र ही मुझे रुपये मिलेंगे। उस समय मैं फौरन कर्ज चुका दूँगा।"

"हँह....मिल चुके सहायता-कोष से रुपये।" जीतू ने उपेक्षापूर्ण हँसी से खदेरनराम को बेचैन बनाते हुए कहा—"तुम तो वर्षों से सहायता-कोष की रट लगा रहे हो। उसके भरोसे कब तक टालते रहोगे? आखिर मेरे भी बाल-बच्चे हैं...."

खदेरन पर मानो सौ घड़े पानी पड़ गये। गिड़गिड़ा उठे—"मुझे लज्जित मत करो। मैं जल्द से जल्द तुम्हारा कर्ज चुका दूँगा।"

"तुम्हारी जैसी मर्जी!" जीतू ने कहा—"हाँ, अब मैंने भी देश-सेवा का प्रण कर लिया है।"

"यह तो बड़ी खुशी की बात है।"

"मगर तुम्हें मेरी मदद के लिए तैयार रहना पड़ेगा।"

"मैं हरदम तैयार रहूँगा!"

"मुझे तुम पर विश्वास है।" जीतू उत्साह से भर उठा। बोला—"मुझे सरकारी राशन बेंचने का अधिकार दिलवा दो। सौ-दो सौ रुपये न्योछावर भी करने पड़ें तो मैं देश-सेवा के नाम पर कदम न हटाऊँगा।"

"तुम मेरा ईमान खरीदना चाहते हो?" खदेरनराम चौंक उठे।

"हटाओ, जाने दो।" जीतू बोल उठा—"तुम्हें ईमान का डर है तो दुकान में चार आने के हिस्सेदार बन जाओ। मेहनत और रुपये मेरे लगेंगे—तुम बैठे-बैठे मुनाफे की चौथाई लिया करना।"

"बदनामी होगी।"

"कैसी बदनामी?" जीतू ने कहा—"बाबू मूरतसिंह तो होल सेलर बन गये और ढाई-ढाई सौ रुपये लेकर कितनों को दुकानदारी का अधिकार दिला दिया। उनकी ओर कोई उँगली उठाता है? तो तुम्हें कोई क्यों बदनाम करेगा? और दुकान होगी मेरे नाम से। मैं चुपके से तुम्हें मुनाफे की चौथाई दे दिया करूँगा।"

"नहीं, मुझे यह स्वीकार नहीं। मुझे माफ कर दो।"

खदेरनराम ने सिर हिला दिया।

"आपकी अक्ल चरने गई है। भली बात भी बुरी लगने लगी है। खैर, मैं चला। फिर इस पर विचार कीजिएगा!...."

जीतू गाल फुलाए चला गया।

"....मेरी किस्मत उस दिन ही फूट गई जब गोबर गणेश से गठबन्धन हुआ। भगवान मुझे धरती से उठा ले जाता! अब मुझसे सहा नहीं जाता...."

अपनी पत्नी को बड़बड़ाते देख खदेरन आँगन में पहुँचे।

"चम्पवा की माँ! क्यों मन का गुबार निकाल रही हो? हरदम गाल बजाना अच्छा नहीं लगता।"

"मेरे लिए मौत भी नहीं है।" उनकी पत्नी थाली की तरह झन्ना उठी—"भगवनवा कान में रूई ठूँसकर पड़ा है...."

"हाय, हाय, यह क्या बकती हो?" खदेरनराम बोल उठे—"तुम्हारे मरने के बाद दुधमुँहे बच्चों का क्या होगा? बेचारे दूसरे बच्चों की माँ को देख-देख तरसते फिरेंगे। तुम्हारे दिल में उनके लिए दया नहीं?"

"तुम तो बड़े दयालु हो। बच्चों की चिंता में तुम्हें नींद नहीं आती। बच्चे दाने-दाने के लिए तरसते हैं, तन पर चिथड़े लपेटे रहते हैं, मगर दया के अवतार लेक्चर झाड़ते फिरते हैं...."

"क्यों फिजूल में जान खा रही हो ! कहो तो किसी के घर डाका डालूँ ! डाका बगैर धन कैसे मिलेगा !...."

"जो लोग अपने बाल-बच्चों की फिकर करते हैं, वे क्या डाका डालते हैं ! तुम्हारी खोपड़ी तो उलट गई है...."

"समझ में नहीं आता, तुम मुझसे क्यों चिढ़ती हो ! हमेशा गाल फुलाए रहती हो।"

"तुमसे क्यों चिढ़ूँगी ! मुझे तो तुम्हारे निठल्लेपन से चिढ़ है।"

"देश की सेवा या जनता की सेवा निठल्लों का काम है ! क्यों चाँद पर थूक रही हो...."

"और लोग भी हैं, जो देश-सेवक हैं। वे तुम्हारी तरह अपने अपने परिवार को उपवास-व्रत कराने पर मजबूर नहीं करते...."

"उनकी नेक स्त्रियाँ तुम्हारी तरह, पति की खोपड़ी पर शब्दों के ढेले नहीं बरसाया करतीं।"

"जो पति अपनी पत्नी को दूध से कुल्ला करायेगा, उसे शिकायत का मौका क्यों मिलेगा !" उनकी पत्नी ने कहा—"मेरे नैहर के घमंडी महरा भी एक हैं, जो देश-सेवा की पूँछ पकड़ कर स्वर्गलोक पहुँच गये।"

"धत्।" खदेरनराम ने दाँतों तले जीभ दबा ली। बोले—"वे तो सही सलामत हैं। उस इलाके के एम० एल० ए० भी हैं।"

"मैं भी तो यही कहती हूँ।" उनकी पत्नी बोली—"वे जूता सीकर, मुश्किल से रोटी-साग जुटा पाते थे, मगर अब तो राजा के कान काट रहे हैं। उनकी जोरू अब मुँह में पाउडर लगाती है और ऐसी चमकदार साड़ी पहनती है कि देखकर मन में डाह होती है।"

"आजादी में सबको बराबर अधिकार है...."

खदेरनराम की पत्नी उनकी बातों पर ध्यान दिये बगैर बोल उठी—"घमंडी महरा की मेहरारू के भाग्य खुल गये। वह अपने में

किसी को नहीं लगाती। घमंड में चूर रहती है।....और क्यों न घमंड करे, उसके पति हाकिम जो हैं! वे बड़े-बड़े हाकिमों के बराबर बैठते हैं।"

"चम्पवा की माँ! पद और घमंड से दूर रह कर जनता की खिदमत करने में जो आत्मसंतोष मिलता है...."

और उनकी पत्नी बोल उठी—"कलयुगी हरिश्चन्द जी! दया कर, मुँह में लगा लगाम लीजिए। मेरी छाती पर साँप लोट रहा है। आपको बातें बनाने के सिवा और क्या आता है!...."

"माँ! लोती...."

और रोटी की माँग पर बच्ची की पीठ पर एक मुक्का लगाती हुई खदेरन राम की पत्नी बोली—"हरामजादी, रोटी....हाथी का पेट है, जो भरता ही नहीं। नाक में दम किये रहती है...."

वह बच्ची को गोद में लेकर बैठ गई और फूट-फूटकर रोने लगी। बच्ची भी चीख रही है।

"भला चम्पवा ने क्या बिगाड़ा था!...." खदेरन ने कहा—"खिसियानी बिल्ली खंभा नोचे।"

"खदेरन काका!" तभी भूखला ने पुकारा।

खदेरनराम चौंक उठे। बाहर निकले। भूखला और कबूतरी के सूखे मुँह पर दृष्टि पड़ी। पूछ बैठे—"भूखला! तुझे तो बाबू मूरतसिंह ने जेल भेजवाया था न...."

"हाँ, काका, भला तुमसे क्या छिपा है!" भूखला की आँखों में आँसू भर आये। बोला—"उनका वश चले तो वे मुझे फाँसी पर चढ़ा दें। मैंने भला उनका क्या बिगाड़ा है! वे मेरे पीछे हाथ धोकर पड़ गये हैं। जब राजा की नीयत खराब हो जाय, तो प्रजा की गुजर कैसे होगी!"

"मुझे सब कुछ मालूम है, लेकिन भीष्मपितामह की तरह मजबूर हूँ।"—खदेरन के मुँह से उच्छ्वास निकल गया।

"काका !" रो पड़ा भूखला। बोला—"मैं बेकसूर पीटा गया। ऐसी मार पड़ी कि छट्ठी का दूध याद आ गया। अभी सरकार का गुस्सा ठंडा नहीं हुआ। वे घात में लगे हैं...."

"ठीक है। मैं उनसे बातें करूँगा। तू घबड़ा मत।"

"काका, तुम्हारे सिवा गाँव में ऐसा कोई मर्द नहीं, जो उनकी आँखों से परदा हटाये।" भूखला ने लम्बी साँस ली। बोला—"मेरी किस्मत अच्छी थी, जो एस० पी० साहब ने मुझे बख्श दिया, नहीं तो सात-आठ वर्षों तक मुझे जेल में चक्की चलानी पड़ती।"

"काका जी !" कबूतरी बोल उठी—"सरकार अगिया-बैताल बन गये। उन्होंने रात मे, मेरे कुल बोझे अपने खलिहान में रखवा लिये। जेल से लौटने पर, यह उनके पास शिकायत लेकर पहुँचे तो उन्होंने कहा, पाँच सौ रुपये कर्ज के अदा करो तो धान के बोझों के बारे में विचार करूँगा।"

"जग्गूसाह से खेत बेंचकर, हाल ही में उनका कर्ज चुकाया है।" भूखला ने आँसू पोंछते हुए कहा—"विश्वास न हो तो जग्गूसाह से पूछ सकते हो। वहाँ मँगनी महरा भी मौजूद थे।"

तभी मँगनी महरा वहाँ आ पहुँचा। वह बाबू मूरतसिंह का एक हलवाहा है। उसने कहा—"खदेरन भैया, सरकार मुझ पर पन्द्रह सौ बाकी गिरा रहे हैं। मैंने सौ-डेढ़-सौ रुपये से अधिक नहीं लिये। अब ज़िन्दगी भर उनकी गुलामी से छुट्टी न मिलेगी। तनिक मेरा हिसाब देख लो। मैं अनपढ़ आदमी हूँ।"

और उसने भूखला की ओर संकेत कर कहा—"इसने मेरे सामने ही कर्ज चुकाया था और सरकार पाँच सौ बाकी बतला रहे हैं। दुनिया क्या उलट जायगी भैया !...."

"उफ़ ! अब नहीं सुना जायगा।"

खदेरन ने कानों में उँगलियाँ डाल लीं।

"खदेरन काका !" भूखला ने आवेश में कहा—"सरकार को न ईश्वर का डर है न ईमान का। वे तो 'पराये धन पर लक्ष्मी-नारायण' वाली कहावत चरितार्थ कर रहे हैं।"

"सवा सोलह आने सच है।" मँगनीमहरा बोल उठा—"उनकी पाँचो उँगलियाँ घी में हैं।"

"भगवान भी ऐसा न्यायप्रिय है, जो छप्पर फाड़कर दे रहा है।" भूखला ने कहा—"वाह रे विधाता !"

"उनके लिए न पंच है और न परमेश्वर...." इस बार कबूतरी ने मन का गुबार निकाला।

"मगर सब दिन एक समान नहीं होते।" मँगनी महरा बोल उठा—"रावण और कंस का अत्याचार भी अधिक समय तक नहीं रहा। विश्वास रख कबूतरी, बबूल बोने वाला आम नहीं पायेगा।"

"कैसे विश्वास किया जाय?" भूखला बोल उठा—"जब अँगरेजी सरकार थी, तब भी गाँव में उनका ही बोल-बाला था और अब भी वही बात है...."

और खदेरनराम की आँखें आकाश की ओर उठ गईं। वे कल्पना की आँखों से देखने लगे, भयंकर आँधी है, जो छल-कपट और बेईमानी के बादलों को छिन्न-भिन्न कर रही है....

तभी उनकी पत्नी अंगारों पर लोटती दरवाजे पर आई। क्रोधावेश में बोली—"धर्मावतार, बच्चे भूख से बिलबिला रहे हैं। जाइए न, कहीं से दो-चार सेर अन्न भीख माँग लाइए। अगर बच्चों को भूखों मारने का इरादा हो तो मत जाइए और भाई-भतीजे से चंडूखाने की गप लड़ाते रहिए....घर पर फूस नहीं नाम धनपत...."

खदेरनराम बगलें झाँकने लगे।

बिल्ली के भाग से सिकहर टूटा

"हाय दादा, गजब हो गया...."

"दौड़ो पंचो, किसी दुश्मन ने खलीफा को जहन्नुम पहुँचा दिया....

गोटरा की चिल्लाहट टुनटुनवा के कानों में पड़ी। वह हड़बड़ाकर उठ बैठा। शोर बढ़ता ही गया।

"सरकार!" टुनटुनवा ने पुकारा।

उत्तर कौन देता? बाबू मूरतसिंह खर्राटे ले रहे थे।

टुनटुनवा ने किवाड़ में लगी जञ्जीर बजाते हुए कहा—"सरकार, हाय मेरे सरकार, आफत टूट पड़ी...."

"कौन है रे?" नशे में लड़खड़ाती आवाज़ निकली।

"मैं हूँ सरकार...."

"सूअर!"

"सूअर नहीं सरकार, मैं आपका गुलाम हूँ।"

"उल्लू का पट्ठा! गोली मार दूँगा।"

"भगवान हुजूर का भला करें।" टुनटुनवा ने कहा—"जरूर उस जालिम को गोली मारिये, जिसने खलीफा का खून किया है।"

"क्या बकता है?"

"सच कह रहा हूँ मेरे मालिक! गाँव भर में हल्ला है, लोटासिंह का सर किसी ने धड़ से अलग कर दिया।"

बाबू मूरतसिंह चौंक पड़े। घबड़ाकर बोले—"ला तो मेरी बन्दूक।"

"सरकार, मैं तो कमरे के बाहर हूँ।"

"साले, भीतर क्यों नहीं आता ?"

"किवाड़ बन्द है, सरकार !"

बाबू मूरतसिंह ने किवाड़ खोल दिये। ढुनढुनवा ने खूँटी से बन्दूक उतार, उनकी ओर बढ़ाते हुए कहा—"पकड़िये हुजूर !"

मूरतसिंह ने बन्दूक लेकर कहा—"किसने खून किया है ?"

"देखा नहीं तो किसका नाम बताऊँ ?"

"तू गधा है। अनुमान से लोग भूत-भविष्य की बात बतलाते हैं।"

"हुक्म देंगे तो कल से ज्योतिष पढ़ना शुरू करूँगा।"

"प्यास लगने पर कुआँ नहीं खोदा जाता बे।" मूरतसिंह ने डपटकर कहा—"चल, मेरे साथ।"

"बहुत अच्छा।" ढुनढुनवा उनके पीछे हो लिया।

"मेरा अनुमान है, भूखला ने मन का गुबार निकाला है...."

मूरतसिंह ने मौन तोड़ा।

"सरकार !" ढुनढुनवा ने मुँह खोला—"मोटरा की औरत से लोटासिंह की साँठ-गाँठ थी। हो सकता है, राह का काँटा साफ करने के लिए, मोटरा ने यह गुल खिलाया हो।"

"तू असली उल्लू है बे।" मूरतसिंह बरस पड़े। फिर सँभलकर बोले—"भूखला पर मेरा वार खाली गया। लोग उँगली उठायेंगे कि मूरतसिंह से भूखला का बाल न बाँका हुआ....और जब तक भूखला जेल से बाहर रहेगा, कबूतरी वश में नहीं आ सकती...."

"सरकार, यह तो लाख रुपये की बात है।"

"फिर भी तू कहता है, मोटरा ने लोटासिंह को मारा...."

"नहीं, अब मैं कहूँगा, लोटासिंह को मोटरा ने...." ढुनढुनवा ने झट अपनी जीभ दाँत से दबा ली। बोला—"नहीं, भूखला ने हलाल किया।"

"जीभ पर काबू रखना होगा।" ढुनढुनवा ने कान पकड़े। बोला—"मैं डंके की चोट कहूँगा, खलीफे का खून भूलला ने किया...."

"लोटासिंह की मौत का हमें गम नहीं; बल्कि खुशी है।" मूरत-सिंह ने कहा—"इस बहाने मैं भूलला के गले में फाँसी का फंदा डलवा सकूँगा। जब तक भूलला जीवित रहेगा, मेरी छाती से काँटा नहीं निकलेगा।"

लोटासिंह की झोंपड़ी के सामने लोग भाटे की तरह जमा थे।

ढुनढुनवा ने रोबपूर्ण स्वर में कहा—"हटो, रास्ता छोड़ो, सरकार की सवारी आ रही है...."

शोर कम हो गया। मूरतसिंह का रास्ता साफ हो गया। वे आगे बढ़े। मोटरा ने झुककर सलाम किया। बोला—"धर्मावतार, मेरे उस्ताद चल बसे।"

मूरतसिंह ने कोई जवाब न दिया। वे लाश के पास पहुँचे। उनकी नजर, लालटेन की रोशनी में एक गँड़ासी पर पड़ी। मुँह से निकल पड़ा—"लोटासिंह की गरदन गँड़ासी से काटी गई है।"

"सच है धर्मावतार।" मोटरा बोला—"जिस तरह देवी के सामने भैंसे का बलिदान होता है, उसी तरह खलीफे का काम तमाम हुआ है।"

मूरतसिंह लाश देखने में मशगूल हुए।

ढुनढुनवा ने नजरें बचा कर, मोटरा के कान में कहा—"तू गधा है। खूब नाक से सितार बजा और गमछे से बार-बार आँखें पोंछ साले!...."

"अपना दाहिना हाथ टूट गया, ढुनढुनवा!" मूरतसिंह ने लम्बी साँस ली।

"सवा सोलह आने सच है।" ढुनढुनवा ने कहा—"कोहड़ापुर में दहाड़ने वाला शेर मारा गया।"

"हाय दादा।" मोटरा रो पड़ा। रोते-रोते बोला—"अब मैं अपने उस्ताद को कहाँ पाऊँगा? गाँव के नौजवान किसके शरीर में पाव भर तेल सोखायेंगे?...."

टुनटुनवा ने उसके आँसू गमछे से पोंछते हुए कहा—"मोटरा, आँसू मत बहा। छाती पर पत्थर रख ले। मेरे मालिक, लोटासिंह की जगह गागरसिंह को बैठा देंगे। सेर गया तो सवा सेर आ जायगा।"

मोटरा और जोर से रोने लगा—"हाय, मेरे खलीफा! गाँव वाले तुम्हारा गुन न भूलेंगे। अब कौन गाँव में साँड़ की तरह घूमेगा?" और रोते-रोते उसने मूरतसिंह के पाँव पकड़ लिए।

मूरतसिंह ने पाँव छुड़ाते-छुड़ाते कहा—"मोटरा, रोना बेकार है। जो मर गया, वह जिन्दा न होगा। तू खलीफे का सच्चा भक्त है तो मेरी मदद कर! मैं उसे हलाल करने वाले को फाँसी पर लटकवा कर छोड़ूँगा...."

मोटरा ने आवेश में कहा—"सरकार, मेरी जान हाजिर है।"

"जान की जरूरत नहीं।" मूरतसिंह ने मंद स्वर में कहा—"तू केवल हाँ में हाँ करता चल।"

और तब वह गाँव वालों की ओर मुखातिब हुए—"सब की जुबान से एक ही बात निकलनी चाहिए...."

"सवा लाख की बात है...." टुनटुनवा बोल उठा।

"यह गँड़ासी किसकी है?" मूरतसिंह ने प्रश्नभरी दृष्टि मोटरा पर डाली। मोटरा का खून सफेद हो गया।

"बोलता क्यों नहीं रे?" मूरतसिंह बोल उठे—"गँड़ासी तेरी है न?"

"जी...." कहते-कहते मोटरा काँप उठा।

"कायर!" मूरतसिंह ने मीठी फटकार सुनायी। बोले—"भीगी

बिल्ली की तरह क्यों खड़ा है? शेर की तरह दहाड़ कर कह कि गँड़ासी मेरी है, मगर उसे भूखला माँग ले गया था।"

मोटरा सहमा हुआ, मौन खड़ा रहा।

"उल्लू!" मूरतसिंह बरस पड़े। बोले—"तू डरता क्यों है? टुनटुनवा ने तुझे भूखला को गँड़ासी देते हुए देखा था। वह गवाही देगा।" और टुनटुनवा की ओर मुड़ पड़े—"क्यों रे टुनटुनवा, बात सही है न?"

"किसमें साहस है, जो हुजूर को झूठा कहे!" टुनटुनवा बोला—"भला आप कभी झूठ का सहारा लेते हैं, जो आज सत्य का गला घोटेंगे!"

"मोटरा!" मूरतसिंह ने कठोरता का आँचल पकड़ लिया। बोले—"अगर तू लोटासिंह का सच्चा चेला है तो भूखला को रस्सी में बाँध कर, मेरे सामने हाजिर कर। वह जानता है, आजादी मिल गई तो उसे गाँव के मालिक के खिलाफ सर उठाने और खून करने की छूट मिल गई। साले को फाँसी पर जो न लटकवाया तो मेरा नाम मूरतसिंह नहीं...."

और मोटरा, मूरतसिंह की ललकार पर अगिया बैताल बन गया। वह सीना फुला कर, भूखला की खोज में निकल पड़ा।

पौ फटते ही टुनटुनवा ने नदी में स्नान किया। 'हरे राम, सीताराम' का जाप भी किया। लोटा में पानी भरा और पीपल के पास पहुँचा। उसने पीपल की जड़ पर पानी डालते हुए कहा—"हे ब्रह्म-बाबा, अपने दुश्मन के यमलोक पहुँचने पर, मैंने सवा आने का लड्डू चढ़ाने की प्रतिज्ञा की थी। उसे जरूर पूरा करूँगा, मगर एक और राह का काँटा है—उसे भी दूर कर दो। उसका नाम है मोटरा। मोटरा जहन्नुम चला जाय, मेरी छाती ठंडी हो जायगी। मैं फौरन लड्डू चढ़ा दूँगा। नाम याद रहे—मोटरा....मोटरा....मोटरा...."

और नजर उठाते ही वह चौंक पड़ा। उसके सामने मोटरा खड़ा था। वह पूछ बैठा—"मेरा नाम किसलिए बार-बार ले रहे थे?"

टुनटुनवा ने अधर पर मुस्कुराहट लाकर कहा—"मोटरा, मैं विनती कर रहा था कि ब्रह्मबाबा तुझे भरदूल के अंडे की तरह बचा दें। भेद खुल गया तो तेरी जवानी माटी में मिल जायगी...."

मोटरा की आँखों में आँसू भर आए। उसने कहा—"मैं तुम्हें अपना दुश्मन समझता था, मगर आज पता चला, तुम मेरे सच्चे हमदर्द हो। उफ! मेरी अक्ल चरने गई थी...."

टुनटुनवा उत्साह से भर गया। उसने अगल-बगल देखा और किसी को न पाकर, पूछ बैठा—"खलीफे को हलाल करते समय तेरे कपड़ों पर खून के छींटे तो नहीं पड़े?"

मोटरा ने फुसफुसा कर कहा—"खलीफे की गरदन से खून की पिचकारी छूट रही थी। मेरे सारे कपड़े उनके खून में रंग गये। हाँ, शोर मचाने के पहले मैंने उन कपड़ों को घर में छिपा दिया था।"

"किसी ने देखा तो नहीं?" टुनटुनवा ने उत्सुकता की पूँछ पकड़ ली।

"मेरी औरत के सिवा किसी ने नहीं देखा।"

"औरत पर क्या विश्वास!"

"ठीक कहते हो।" मोटरा ने दुःख भरे स्वर में कहा—"वह तो खाट पर गुमसुम पड़ी है और मुझे शेरनी की आँखों से घूरती है।"

"उससे होशियार रहना। कहीं सारा गुड़-गोबर न हो जाय।"

"मैं होशियार रहूँगा।"

"कपड़े कहाँ हैं?"

"काठ के सन्दूक में।"

"ठीक है। उसे रात में जला देना।"

"बहुत अच्छा।"

"हाँ, उसे दिन में छूना भी नहीं। दीवारों को भी आँखें होती हैं।"

"ऐसा ही होगा।"

"मैं चला...."

और ब्रह्मबाबा को प्रणाम कर, ढुनढुनवा तेजी से चल पड़ा।

दिमाग हाथी का कलेजा शेर का

बाबू मूरतसिंह ने मुँह से धुआँ उगलते-उगलते कहा—"टुनटु-नवा, जादू का तमाशा हो गया...."

टुनटुनवा ने उनके हाथ से चिलम ले ली। बोला—"एकदम छूमन्तर...."

मूरतसिंह ने हाथ मलते हुए कहा—"सबको विश्वास हो गया था, भूखला को फाँसी हो जायगी, मगर एस० पी० ने सारा गुड़-गोबर कर दिया।"

"ओह! भूखला फिर बाघ के मुँह से निकल गया।"

"टुनटुनवा! एस० पी० को कैसे पता चला कि मोटरा के सन्दूक में खून से सने कपड़े हैं?"

"खुफिया पुलिस के ज़रिये...." टुनटुनवा अपने स्वामी के पाँव दबाने लगा।

मूरतसिंह ने दिमाग पर जोर दिया। बोल उठे—"एस० पी० के वश में जरूर कोई भूत या जिन्न है।"

"धर्मावतार!" टुनटुनवा ने मुँह खोला—"खुफिया पुलिस के आदमी किसी भी भूत से कम नहीं होते।"

"जो हो।" मूरतसिंह ने कहा—"दारोगा इसलाम हुसेन ने अपनी सारी ताकत लगा दी, मगर एस० पी० के सामने उनकी एक नहीं चली। एस० पी० ने भूखला को रिहा कराकर ही दम लिया।"

"खुफिया पुलिस ने भंडाफोड़ कर दिया होगा सरकार।"

"तू बार-बार खुफिया पुलिस का नाम लेकर, मेरा गुस्सा क्यों

बढ़ाता है ?" मूरतसिंह झुँझला उठे—"भला भूत का मुकाबिला खुफिया पुलिस का आदमी करेगा !"

मूरतसिंह की नाक पर गुस्सा देख, टुनटुनवा ने कहा—"सत्य-वचन धर्मावतार, आँधी के आगे पंखे की क्या हस्ती !"

"टुनटुनवा !" मूरतसिंह ने लम्बी साँस ली।

"जी सरकार...." वह उनका मुँह निहारने लगा।

"कबूतरी का क्या हाल है ?"

"उसने आँखें फेर लीं। गाल फुलाये रहती है साली।"

"आँखें चार होने पर, मोम बन जायगी।"

"नहीं सरकार। सीधी उँगली से घी नहीं निकलता।" टुनटुनवा आवेश में बोल उठा—"चार लठैतों से उसे चारपाई सहित उठवा मँगायें।"

"गाँववाले बागी हो जायँगे।" मूरतसिंह ने सिर हिलाया।

"हाँ, सभी आपके खिलाफ हैं, मगर किसी की एक नहीं चलती। कहावत है, जबरदस्ती का ठेंगा सिर पर...."

"क्या गाँववाले मुझसे खिलाफ हैं ?" मूरतसिंह के कान खड़े हुए।

"जी सरकार।" टुनटुनवा बोल उठा—"जो लोग 'जी हुजूर' 'हाँ हुजूर' कहकर जूता चाटते हैं—उन्हें आप अपना हितैषी समझते हैं, मगर वे आस्तीन के साँप हैं। उनके मुँह में राम है और बगल में छुरी। आपके डर से वे मुँह में दही जमाये रहते हैं, मगर मौका मिलते ही वे सरकार के मूड़ के एक-एक बाल बीन लेंगे।"

"सवा लाख की बात है।" मूरतसिंह ने सहमकर कहा—"मुझे भी कभी-कभी शुबहा होता है...."

"सरकार, कोई ऐसा उपाय करें कि गाँववाले सरकस के शेर की तरह आपके इशारे पर नाचा करें।"

"हा....हा....हा....हा" मूरतसिंह हँस पड़े। हँसते-हँसते बोले—

"तूने नाहक डरा दिया था। मेरे सामने किसकी हस्ती है, जो सर उठायेगा! मुझे 'जादू' मालूम है 'जादू'...."

"फिर देर क्यों? गाँववालों की खोपड़ी उलट दीजिए। वे मोची के मोची बने रहें।"

"आगे-आगे देख, क्या होता है...." मूरतसिंह ने कहा—"तू मुन्शी को मेरा हुक्म सुना दे, कि वे किसी को मेरी ससुराल भेजकर, धर्मपाल पंडित को बुला लें।"

"सरकार, पण्डित के लिए किसी को ससुराल भेजने की क्या जरूरत!" टुनटुनवा ने कहा—"आजकल तो गाँवों में टिड्डी-दल की तरह पंडितों का झुण्ड मुँह ताक रहा है। किसी के सर पर लम्बी-चौड़ी पाग है तो किसी के हाथ में झाल और सारंगी...."

"धुत्!" मूरतसिंह मुस्कुरा पड़े। बोले—"मुझे ऐसे सीधे-सादे जीवों की जरूरत नहीं। मुझे तो ऐसा पण्डित चाहिए, जिसने सारा वेद-शास्त्र कंठस्थ कर लिया हो।"

"ऐसी बात है तो धर्मपालजी को ही बुलाना ठीक होगा।"—टुनटुनवा ने कहा—"वे अलबत्ता धुरन्धर हैं। पिछले साल वे झाल बजा-बजाकर रामायण गाते थे और सुननेवाले पीपल के पात की तरह झूमते थे।"

"इस साल उनका करतब देखना! हाँ, मुन्शी को मेरा हुक्म सुना दे। कल सुबह होते ही आदमी चला आना चाहिए।"

"बहुत अच्छा।" टुनटुनवा कमरे से बाहर निकल गया।

मूरतसिंह का आसन हिला। उन्होंने आलमारी खोल कर, नेपाली दारू की बोतल निकाली और गटागट उसे खाली कर गये।

सुरादेवी ने रंग जमाया। वे लड़खड़ाते हुए बिस्तर पर पड़ गये।

"टुन टुन....वा...." लड़खड़ाती जुबान की करामात थी।

लेकिन टुनटुनवा वहाँ कहाँ! वह तो मुन्शी जी के पास था।

उत्तर न पाकर, मूरतसिंह की नाक पर गुस्सा आ गया।

"सूअर...."

"नमक-हराम...."

"कान में ढेला लगा बैठा...."

"गोली मार दूँगा साले को...."

"मेरे सर चढ़ने लगा है...."

"कचूमर निकाल दूँगा...."

टुनटुनवा लौटा। मूरतसिंह की हाथ में बोतल देख, उसका माथा ठनका। उसने गिड़गिड़ाते हुए कहा—"गुलाम हुक्म बजाकर लौट आया।"

"टुनटुनवा है रे...." मूरतसिंह ने आँखें खोलीं और बोतल पटककर कहा—"साला!"

बोतल टूट गई। टुनटुनवा को अपने बचाव के लिए एक उपाय सूझा। उसने मन्द स्वर में कहा—"कबूतरी से भेंट हुई थी सरकार...."

"कबूतरी!" मूरतसिंह के मुँह में पानी भर आया। उन्होंने गुस्सा थूककर कहा—"और पास आ...."

टुनटुनवा पलङ्ग के पास पहुँचा और मूरतसिंह का पाँव दबाने लगा।

"वह आयेगी न?" मूरतसिंह ने प्रश्न किया।

"उसके मन के चोर का पता मुझे नहीं...." टुनटुनवा और उत्साह से पाँव दबाने लगा।

"वह जरूर आयेगी।" मूरतसिंह की आँखें बन्द हो गईं। कल्पना-लोक में विचरण करते हुए उन्होंने कहा—"मुझे बहुत प्यार करती है।"

"भला आपको क्यों न प्यार करेगी! सरकार, आप प्यार करने के ही काबिल हैं।" टुनटुनवा ने बहुत मुश्किल से अपनी हँसी रोकी।

"कब तक राह निहारूँ?"

"जब तक वह आ न जाय...."

"इन्तजार की घड़ियाँ मुश्किल से कटती हैं।"

"मगर इन्तजार में जो मजा है, वह मिलन में नहीं मालिक।"

"टुनटुनवा, तूने किसी औरत का प्यार देखा है?"

"नहीं सरकार। मेरे हिस्से में तो नफरत ही मिली है।"

मूरतसिंह ने क्षणभर मौन रह कर, मुँह खोला—"कबूतरी से क्या-क्या बातें हुईं?"

"सरकार!" टुनटुनवा बोल उठा—"कबूतरी से खास बातें करने ही जा रहा था कि दाल-भात में मूसल बन कर खदेरनराम टपक पड़े।"

"खदेरनराम—खदेरनराम। जहाँ देखो खदेरनराम...." मूरतसिंह ने दाँत पीस कर कहा—"खदेरनराम के मारे नाक में दम है।"

"सच है सरकार। वह बहुत ही बुरा आदमी है।" टुनटुनवा ने आवेश में कहा—"हरदम ईमान की बात करता है। सचाई से जैसे धोती और लंगोटी की तरह गठबन्धन है।"

"तभी तो उसके घर में चूहे डंड पेलते हैं।" मूरतसिंह बोल उठे—"वह मेरी आँखों में काँटे की तरह चुभता रहता है। जीतू बनिया से उस पर नालिश करवा कर आटे-दाल का भाव मालूम करा दूँगा।"

"नेक विचार है।"

"राजद्रोही और बागी के नाम से उसे बदनाम करूँगा।"

"वाह, वाह!"

"राह चलते, किसी लठैत से टाँगे तोड़वा दूँगा।"

"वाह ! गजब की सूझ है।" टुनटुनवा उछल पड़ा। बोला—"वह पंगु हो जायगा और बैठे-बैठे मक्खी मारेगा साला।"

मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरा। अभिमान भरे स्वर में बोले—"सर उठाने वालों को माफ करना मेरे जूते भी नहीं जानते।"

"सरकार, आप नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते। ईंट का जवाब पत्थर से देते हैं।" टुनटुनवा ने कहा—"आप में बड़े सरकार के सभी गुण हैं।"

"राजा बाबू जी का क्या मुकाबला !" मूरतसिंह ने गद्‌गद् स्वर में कहा—"वे तो मरते-मरते भी दुश्मनों के गले में ढोल बाँध गये थे।"

"वह कैसे, सरकार !" टुनटुनवा उत्सुकता से भर गया। बोला—"वह रामायण तो मुझे मालूम नहीं।"

"तो सुन ले।"

"सरकार की दया...." टुनटुनवा जल्दी-जल्दी पाँव दबाते हुए मन की प्रसन्नता प्रकट करने लगा।

"जब डाक्टरों ने एक राय होकर कहा, बाबूजी कुछ ही घंटों के मेहमान हैं तो उन्होंने अपनी अन्तिम अभिलाषा पूरी करने का हुक्म दिया। उनके आदेशानुसार मैंने दुश्मनों को उनके सामने उपस्थित किया।"

मूरतसिंह आवेश में उठ बैठे। पलथी मारकर बोले—"बाबू जी की नजर दुश्मनों पर पड़ी और आँखों से गंगा-यमुना बहने लगी। रोते-रोते बोले—प्यारे भाइयो, आप लोगों को बहुत सताया, पाप की गठरी भारी कर ली, आप लोग मुझे माफ कर दें और मेरी अन्तिम समय की इच्छा पूरी करें....

दुश्मनों में से एक ने कहा—"आपका हुक्म सर-आँखों पर। आप बेधड़क मन की बात बतायें।"

बाबूजी ने रुक-रुककर कहा—"मेरी आत्मा को तभी शान्ति मिलेगी जब आप मेरी प्रार्थना न ठुकरायेंगे।"

सभी दुश्मनों ने एक राय होकर कहा, हम आपकी अभिलाषा अवश्य पूरी करेंगे, चाहे हमें लाख घाटा उठाना पड़े।

"बाबू जी ने कहा—मेरे प्राण निकलते ही आप लोग भाले-बर्छे से मेरे तन को छेद डालें, जिससे अपनी करनी का फल मुझे धरती पर ही मिल जाय और नरक की आग में जलने से मैं बाल-बाल बच जाऊँ।"

"दुश्मन बहुत घबड़ाये। मैंने हाथ जोड़े। अँगूठा भी चूमा। वे जाल में फँस गये। उन्होंने बाबू जी की लाश पर मन के बुखार उतारे और मैंने थाने में खबर दे दी। उसके बाद थानेदार ने ऐसा गुल खिलाया कि मेरी छाती ठंढी हो गई।"

"ही....ही....ही....ही...." ढुनढुनवा बत्तीसी दिखलाये बगैर न रह सका। बोला—"गुड़ दिखाकर ढेला मारा गया। बड़े सरकार की खोपड़ी का जवाब नहीं।"

मूरतसिंह ने मूछों पर हाथ फेरते हुए कहा—"बाबू जी का दिमाग हाथी का था और कलेजा शेर का...."

तभी मुंशी चम्पत लाल ने आकर कहा—"सरकार, बाहर शेरमार खाँ बैठे हैं। आपका दर्शन करना चाहते हैं।"

ढुनढुनवा ने दाँतों तले जीभ दबा ली। बोला—"सरकार! कसूर माफ हो। मैं यह खबर देना भूल गया था।"

"तेरा दिमाग उल्लू का है।" मूरतसिंह उस पर गुस्सा उतार, मुंशी की ओर मुड़े। बोले—"मुंशी जी, उन्हें फौरन भेज दें।"

"जो हुकम।" मुंशी लौट पड़े।

"गाँजा रगड़!" मूरतसिंह ने ढुनढुनवा के सिर पर एक चपत लगाकर, हाथ की खुजली मिटायी।

मुस्कुराते हुए टुनटुनवा ने टेंट से गाँजे की पुड़िया निकाली।

शेरमार खाँ ने कमरे में प्रवेश किया।

"आदाब हुजूर।"

"तशरीफ रखिए।" मूरतसिंह बोल उठे—"कोदो महतो और मडुआ महतो वाला महाभारत कब होगा?"

"कल ही चढ़ाई होगी।"

"शाबाश!" मूरतसिंह की बाछें खिल गईं। बोले—"मैं लठैतों के पास रातोंरात खबर भेजवा दूँगा।"

"कोदो महतो के कान खड़े हैं।" खाँ ने कहा—"उसने रेल-राउत और नेपालसिंह जैसे अनेक मशहूर पहलवानों को इकट्ठा किया है।"

"कोई परवाह नहीं।" मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरते हुए कहा—"बल से बुद्धि बड़ी होती है। आप मेरी बुद्धि पर भरोसा रखिए।"

शेरमार खाँ ने प्रश्नभरी दृष्टि मूरतसिंह के मुख पर डाली।

मूरतसिंह मुस्कुरा पड़े। बोले—"चढ़ाई के पहले किसी को कोदो महतो के पास दौड़ा दीजिए। वह हाँफते-हाँफते कहेगा—मडुआ महतो की ओर से दो हजार लठैत आ रहे हैं। जान प्यारी न हो तो रफूचक्कर हो जाइए। लठैत आ गये तो हड्डी का भी पता न लगेगा। उसके बाद चारों ओर से गाँव पर धावा बोल दीजिए। जो भी सामने आ जाय, उसे एक-दो लट्ठ लगवाते जाइए। मैदान मारते देर न लगेगी।"

"हुजूर, आप बेफिक्र रहें। मैं शान में बट्टा न लगने दूँगा...."

और आवश्यक हिदायतें दे खाँ साहब विदा हुए।

टुनटुनवा ने मूरतसिंह के हाथ में गाँजे की चिलम पकड़ा दी।

पहर भर दिन चढ़ते-चढ़ते मूरतसिंह के दरवाजे पर सैकड़ों लठैत जमा हो गये। महावीर जी को पाँच सेर लड्डू चढ़ाए गये। देवी-

स्थान में कई बकरों का बलिदान हुआ। पीपल की छाँह में एक लठबाज आल्हा गाने लगा। ढोलक की ताल पर लठैतों की नसें लड़ने के लिए फड़कने लगीं। मांस की सोंधी गन्ध कितनों के मुँह से लार टपका रही थी।

दोपहर बीतते-बीतते सभी लठैत खा-पीकर निश्चिन्त हो गये। मूरतसिंह, शेरमार खाँ के आदमी की बाट जोह रहे थे। खाँ का आदमी आया। उसने खाँ का सम्वाद सुनाया। मूरतसिंह ने लठैतों को उसके साथ जाने का आदेश दे दिया।

सूरज डूब रहा था। मूरतसिंह बड़ी बेचैनी से उस महाभारत के परिणाम की प्रतीक्षा कर रहे थे। अचानक शोर सुनाई पड़ा। लठ-बाज 'बाबू मूरतसिंह जिन्दाबाद' के नारे लगा रहे थे।

अब शेरमार खाँ की सफलता में उन्हें शुबहा न था।

वे बाँसों उछलने लगे।

बिना टोटे की बन्दूक

कबूतरी चूल्हे के पास से उठी। भूखला के पास आई। भूखला अपनी झोंपड़ी में औंधे मुँह पुआल पर पड़ा था। वह चौंक उठी। बोली—"जमीन क्यों सूँघ रहे हो?"

"उफ्! थानेदार ने नाहक मेरा अंजर-पंजर ढीला कर दिया...." भूखला कराह उठा। बोला—"न जाने किस जन्म का वैर सधाया बाबू मूरतसिंह ने।"

"अब नाक बजाने से क्या लाभ!" कबूतरी बोल उठी—"उठो!....खुद्दी की दो रोटियाँ खा लो। बथुए का साग भी है। आज मूस के बिल खोद-खोदकर, जो धान इकट्ठा न करती तो यह भी नसीब न होता।"

"पुरवा से दर्द और बढ़ गया है।" भूखला उठ बैठा। बोला—"अब हमें यह गाँव छोड़ देना चाहिए।"

"वह क्यों?" कबूतरी के कान खड़े हुए।

"जल में रहकर हम मगर से कब तक बचेंगे?"

"मगर कहाँ नहीं हैं? बड़ी मछलियाँ छोटी मछलियों को कहाँ नहीं खाती हैं? भगवान पर विश्वास रखो। हम लोगों का दिन जरूर लौटेगा। सदा नाव कागज की नहीं बहती।"

"तो यहाँ रहकर हम भूखों मरें?" भूखला झुँझला उठा। बोला—"खदेरन काका बेवकूफ हैं जो गाँव छोड़कर, शहर चले गये?"

"सुना है, वे साधू हो गये।"

"कहनेवाले का सर...." भूखला के माथे पर बल पड़ गये।

उसने कहा—"जाते समय वे मुझसे मिलते गये थे। उन्होंने कहा था, नौकरी की तलाश में जा रहा हूँ। यहाँ तो पेट पर आफ़त है।"

कबूतरी अज्ञात आशंका से काँप उठी। बोली—"जिस तरह वे अपने बाल-बच्चों को भाग्य के भरोसे छोड़ गये हैं, उसी तरह तुम भी मुझे मझधार में छोड़ जाओगे?"

"नहीं रे।" भूखला बोल उठा—"मैं तुझे भी साथ ले चलूँगा। तू सेठों के घर में चौके-बर्तन का काम सँभालना और मैं उनके पाँव दबाऊँगा, तेल मालिश करूँगा। रिक्शा भी चला सकता हूँ...."

"ठीक है।" कबूतरी उत्साह से भर गई। बोली—"पौ फटते ही हम गाँव छोड़ देंगे। उठो, रोटियाँ खा लो...."

"यह लो महावीर जी का प्रसाद, बतासे और लड्डू।" ढुनढुनवा ने आँधी की तरह झोंपड़ी में प्रवेश किया और लगभग आधसेर बतासे-लड्डू भरा एक दोना भूखला के आगे रख दिया।

पति के साथ ही पत्नी भी चौंक उठी। दोनों शंकित-से ढुनढुनवा का मुँह देखने लगे। ढुनढुनवा बोल उठा—"मेरा मुँह क्यों निहार रहे हो? तुम्हें मालूम नहीं आज खरपुरवा के महाभारत में अपने 'सरकार' की जीत हुई है? गाँव भर में लड्डू-बतासे बाँटे गये हैं फिर तुम्हें ही सरकार क्यों भूलते?"

"सरकार का ख्याल जो हमलोगों पर रहता तो आज हमारी यह दुर्दशा होती!" कबूतरी के मुँह से उच्छ्वास निकल पड़ा। बोली—"साल भर तनतोड़ मेहनत करने पर भी पेट की आग नहीं बुझती।"

"जो हुआ सो हुआ।" भूखला ने कहा—"सरकार से कहना, वे हमारी भूल-चूक माफ कर देंगे। कल हम गाँव छोड़ देंगे।"

"गाँव छोड़ दोगे? क्या बकते हो?" ढुनढुनवा के कान खड़े हुए। बोला—"ऐसी बात जुबान पर मत लाना।"

"सरकार की आँखों में हमलोग काँटों की तरह खटकते हैं फिर क्यों न उनकी नजरों से दूर चले जायँ ?...." कबूतरी ने लम्बी साँस ली।

"सरकार को तुमलोग समझे नहीं...."

"क्या और कुछ समझना बाकी है ?" भूखला के अधर पर व्यंग्यपूर्ण मुस्कान फूट पड़ी।

"हाँ।" टुनटुनवा गंभीर हो गया। बोला—"वे अब साधु हो गये। उन्होंने गरीबों की भलाई का प्रण कर लिया...."

"सत्तर चूहे खाकर, बिल्ली चली हज को...." भूखला ने कहना चाहा, किन्तु मुँह न खोल सका।

"हमें क्या...." कबूतरी के मुँह से उच्छ्वास निकल पड़ा। बोली—"हमारा घर तो बरबाद हो ही गया...."

"अरे !" टुनटुनवा चौंक पड़ा। बोला—"मैंने वह खबर तो सुनाई ही नहीं...."

"कैसी खबर ?" कबूतरी उत्सुक हो उठी।

"सरकार ने भूखला का कसूर माफ कर दिया। कल यह उनके खलिहान में अपने धान के बोझों की दँवरी कर सकता है। इसके दोनों बैल भी वापिस मिल जायेंगे। यह पहले की तरह, सरकार द्वारा दिया गया खेत बटाई की शर्त पर जोत सकता है...."

कबूतरी अपनी प्रसन्नता छिपाती हुई बोल उठी—"तुमने भंग तो नहीं पी है ? कभी ऐसा हो सकता है...."

"तुम्हें विश्वास नहीं...." टुनटुनवा ने कहा—"ठीक है। तुम मेरे साथ चलो। अभी सच-झूठ का भेद खुल जायगा।"

"मैं वहाँ क्या करने जाऊँ...."

"रूठो मत, कबूतरी।" टुनटुनवा बोला—"सरकार तुमसे माफी माँगने के लिए बेचैन हैं। उन्हें अब दूध का धोया समझो।"

और कबूतरी के साथ टुनटुनवा बाबू मूरतसिंह के कमरे में पहुँचा। वह नशे में चूर बिस्तरे पर पड़े हुए छत की कड़ियाँ गिन रहे थे। आहट मिलते ही उन्होंने दृष्टि घुमाई। कबूतरी पर नजर पड़ते ही वे उछल पड़े। खूँटी से लटकती बन्दूक उठाई और कबूतरी के हाथों में पकड़ा दी।

"उठा बन्दूक और मेरी छाती में गोली मार दे...."

बाबू मूरतसिंह की आँखों में आँसू भर आए।

कबूतरी हक्की-बक्की खड़ी रही। मूरतसिंह बोल उठे—"उठा बन्दूक, देर मत कर। मैं ऐसी जिन्दगी पसन्द नहीं करता जिसमें रात भर छत की कड़ियाँ गिननी पड़ें...."

"आज क्या हो गया है आपको?...." बड़ी कठिनता से कबूतरी ने मुँह खोला।

"अरी, तुम बड़ी भोली हो! 'आग लगाके जमालो दूर खड़ी' वाली कहावत चरितार्थ कर रही हो!...."

"हाय राम, मैंने कहाँ आग लगाई है! नशा अधिक हो गया है। सो जाइए। बक-झक से नशा और बढ़ जायगा...."

"नींद तो तूने चुरा ली है...."

"हाय दैया, कहीं नींद भी चुराई जाती है!" कबूतरी ने बड़ी कठिनता से हँसी रोकी।

"मैं समझ गया, तू मेरी छाती में गोली न मारेगी। तुझे मेरा तड़पना ही भला लगता है।" मूरतसिंह आवेश में भर गये। बोले—"तू यह चाहती है, जिस तरह मजनू जंगलों में 'लैला लैला' पुकारा करता था उसी तरह मैं गाँव-गाँव बालों में धूल लगा कर 'कबूतरी कबूतरी' चिल्लाया करूँ। लेकिन ऐसा नहीं होगा। वैसी हालत आने के पहले ही मैं स्वर्ग चला जाऊँगा। दे मेरी बन्दूक मैं खुद गोली से अपना सर उड़ा डालूँ...."

मूरतसिंह लड़खड़ाते हुए बन्दूक लेने आगे बढ़े। कबूतरी की घबड़ाहट और बढ़ी। बोली—"नहीं, नहीं, मैं बन्दूक नहीं दूँगी...."

"मैं कहता हूँ, दे दे...."

और मूरतसिंह ने बन्दूक पकड़ ली। कबूतरी बन्दूक अपनी ओर खींचने लगी और मूरतसिंह अपनी ओर। कबूतरी को अपने प्रयत्न में सफलता मिली। मूरतसिंह ने बन्दूक से अपना हाथ अलग हटाते हुए कहा—"मैं समझ गया, तू मुझसे मुहब्बत करती है...."

"नहीं, नहीं...." हाँफते-हाँफते कबूतरी बोली

"क्या कहा? फिर से कहो तो...." मूरतसिंह गंभीर हो गये। कबूतरी उनका मुँह निहारने लगी।

मूरतसिंह पूछ बैठे—"तू मुझसे मुहब्बत नहीं करती है न?"

कबूतरी ने सहमते-सहमते सिर हिला दिया।

"तो ला मेरी बन्दूक!" मूरतसिंह आवेश में आगे बढ़े। बोले—"मैं तुझ जैसी काठ की मूरत से मुहब्बत करने के बदले अपनी जान कुर्बान कर देना अच्छा समझता हूँ। किसी ने सच कहा है, शेर के मुँह में समा जाय, मगर किसी औरत से मुहब्बत न करे। मैं तेरी मुहब्बत में आकाश के तारे गिनता रहूँ और तुझे मेरी परवाह भी नहीं हो—यह तो डूब मरने की बात है....ला, दे मेरी बन्दूक!"

"हैं, हैं, ऐसा जुल्म मत कीजिए...." कबूतरी बन्दूक जोर से पकड़े हुए पीछे हटने लगी। मूरतसिंह ने लपक कर उसके हाथों से बन्दूक छीन ली।

"अब जान देने से मुझे कोई नहीं रोक सकता। हाँ, तू मेरी शर्त मान ले तो मैं अपना इरादा छोड़ सकता हूँ।"

"कैसी शर्त?" कबूतरी की जीभ तालू में सटने लगी।

"तुझे मेरी हवेली में ही रहना होगा।" मूरतसिंह ने कहा—

"लोग तुझे मेरी नौकरानी समझेंगे, मगर तू मेरी जान की मालकिन होगी।....जल्द फैसला कर! तेरे मुँह से 'नहीं' निकलेगा और गोली मेरे सर को छेद डालेगी।"

मूरतसिंह ने बन्दूक की नली कंठ के ऊपर लगा ली।

कबूतरी की आँखों में आँसू भर आये! वह बन्दूक छीनने का प्रयत्न करती हुई बोली—"आप जो कुछ कहिएगा, मैं मान लूँगी, मगर जान मत गँवाइए...." उसका गला भर आया।

"अरी, रोती क्यों है? चुप भी रह पगली! यह बिना टोटे की बन्दूक है...." मूरतसिंह ठठाकर हँस पड़े।

पहले भीतर तब देवता पितर

सुबह के जलपान के बाद बाबू मूरतसिंह गाँजे का दम लगा रहे थे। एकाएक टुनटुनवा खुशी से उछल पड़ा। बोला—"धर्मावतार, धर्मपाल पण्डित का आसन आ गया...."

"कहाँ हैं पंडित ?" मूरतसिंह उत्सुकता से भर गये।

उसी समय एक मिरजईधारी महापुरुष ने बैठकखाने में प्रवेश करते हुए कहा—"यजमान की जय हो।"

"अरे वाह, धर्मपाल जी, आप तो गूलर का फूल बन गये थे।" मूरतसिंह ने मुस्कुराते हुए कहा—"मुझसे नाराज थे क्या ?"

"हरे राम! हरे राम!! यजमान सेमर के फूल की तरह फूलें-फलें, सुना कि नहीं। मेरी रोजी तो आप जैसे पुण्यात्मा लोगों से ही चलती है सुना कि नहीं। मैं तो सेवक हूँ....सुना कि नहीं। सेवक अपने स्वामी से नाराज होगा तो उसका पेट कैसे भरेगा....सुना कि नहीं।"

"सुना पंडितजी, खूब सुना।" मूरतसिंह हँस पड़े। बोले—"आसन ग्रहण कीजिए और बतलाइए जलपान हुआ है या नहीं ?"

"जलपान तो अभी नहीं हुआ धर्मावतार! हाँ, स्नान-पूजा से राह में ही फुरसत पा चुका हूँ।" पण्डितजी मूरतसिंह के पास जा बैठे।

"तो पेट-पूजा से भी फुरसत पा लीजिए। उसके बाद बतकही होगी।"—मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरा।

"लाख रुपये की बात कह दी यजमान ने....सुना कि नहीं।" पंडित जी के मन की प्रसन्नता मुखाकृति पर झलक गई। बोले—

"दुनिया पेट-पूजा के लिए ही जान देती है। पेट न रहे तो कौन किसको पूछे....सुना कि नहीं। किसी ने कहा भी है—पहले भीतर तब देवता पितर। इसलिए मुझे भी पेट-पूजा से विशेष प्रेम है। मैं दुनिया के बाहर तो नहीं....सुना कि नहीं।"

"तो जलपान के लिए क्या प्रबन्ध किया जाय?" मूरतसिंह पूछ बैठे।

"तकलीफ की कोई बात नहीं....सुना कि नहीं।" पंडित जी ने मुँह पर हाथ फेरते हुए कहा—"पाँच सेर चिउड़ा और एक पसेरी दही मँगवा लीजिए। ऊपर से दो सेर चीनी भी जरूर रहनी चाहिए। मिरचे का अचार, नमक इच्छानुसार....सुना कि नहीं।"

"बस, इतना ही?" मूरतसिंह चौंक पड़े—"क्या अनपच की बीमारी हो गई है आपको?"

"हाँ, यजमान....सुना कि नहीं।" पंडित जी मुँह सिकोड़ कर बोले—"अब पहले वाली देवी है न उसकी कड़ाही। पहले जब मैं आता था....सुना कि नहीं....तो दो-दो पसेरी चिउड़ा और तीन-तीन पसेरी दही से सुबह-शाम जलपान करता था....सुना कि नहीं....और दोपहर-रात के भोजन का तो कोई ठिकाना न था...."

"मुझसे क्या कहते हैं पंडित जी!" मूरतसिंह ने आवेश में कहा—"एक बार जब आप आम के दिनों में आये थे, भोजन के बाद आम खाने बैठे तो गुठलियों का ढेर लग गया था। गुठलियों की ऊँचाई जब आपकी नाक छूने लगी तो मैंने हठ करके आसन से आपको उठा लिया था।"

"पेचिश के मारे मेरा साहस टूट गया गरीब-परवर....सुना कि नहीं....नहीं तो अब तक वही बात रहती।" पंडित जी उदास हो गये।

"कोई बात नहीं, मेरे पास सुलेमानी नमक है।" मूरतसिंह ने उत्साह पूर्वक कहा—"आप मनभर खाने से जी न चुराइए।"

और वे टुनटुनवा की ओर मुड़ पड़े—"टुनटुनवा !"

"जी सरकार !"

"साला यहाँ क्यों बैठा है ?" मूरतसिंह डपट कर बोले—"सिपाहियों को लेकर गाँव में जा और पंडित जी के जलपान का जल्द इन्तजाम कर !"

"बहुत अच्छा, धर्मावतार।" टुनटुनवा तेजी से बैठकखाने के बाहर निकल गया।

"पंडितजी, आप घबड़ाइए नहीं।" मूरतसिंह ने स्वाभाविक स्वर में कहा—"जब तक आप मेरे पास रहेंगे, आपके पेट में तिल रखने की जगह न रहेगी।"

"आप राजा हैं धर्मावतार....सुना कि नहीं...." पंडित की बाँछें खिल गईं। अचानक कोई बात स्मरण हो आई। बोल उठे—"छोटे सरकार नहीं दिखाई देते...."

"वह कलकत्ते में रहता है।" मूरतसिंह ने कहा—"कालेज में शिक्षा पा रहा है।"

"उनके हाथ तो पीले न हुए होंगे।"

"नहीं !" मूरतसिंह ने मूँछों पर हाथ फेरते हुए कहा—"मेरा प्रण है, दहेज में एक लाख रुपये नकद जो माई का लाल देगा, उसी की बेटी से उसका गठबन्धन कराऊँगा।"

"उतने रुपये तो किसी राजा के खजाने से ही निकलेंगे...."

"तो मैं किसी भिखारी के यहाँ रिश्ता ही क्यों जोड़ूँगा ?"

"मेरा मतलब यह नहीं सरकार....सुना कि नहीं !" पंडित वाणी को घी से चुपड़ कर बोल उठे—"कोई महापुरुष लाख से दो-चार हजार कम या अधिक दे दे तो उसके दरवाजे भी बारात ले जाने में हुजूर का नुकसान न होगा। जवान बेटे को साँड की तरह आजाद छोड़ना मंगलकारी नहीं....सुना कि नहीं।"

"सुना !" मूरतसिंह के मन का आक्रोश बहुत रोकने पर भी स्वर में झाँक ही गया। बोले—"आजकल तो दो-चार हजार की औक़ात पर पाँच-सात हजार की माँग होती है। जिसका बेटा दो-चार अक्षर पढ़ ले—उसका पाँव तो जमीन पर नहीं पड़ता। अब आप ही इन्साफ करें, मैं केवल एक लाख रुपये बेटे के विवाह के लिए चाहता हूँ तो किसका सर फोड़ता हूँ !"

"किसी का नहीं सरकार....सुना कि नहीं।"

"मेरा सपूत तो बी० ए० की परीक्षा दे रहा है...."

"बेशक धर्मावतार। उनके लिए तो अगर दहेज में पाँच लाख भी वसूल करें—वह भी कम ही होगी।" पंडित ने उत्साहपूर्वक कहा—"एक प्राचीन पुस्तक हाल में ही हाथ लगी थी....सुना कि नहीं। उसमें दूरदर्शी लेखक ने लिखा था, जो महापुरुष अपने बेटे का विवाह बेटे के ससुर के सिर के एक-एक बाल नोंचकर नहीं करता, उसे विष्णु भगवान यमराज के भतीजे से पकड़वा मँगाते हैं और जीते-जी नरक की आग में झोंक देते हैं।"

"जरूर लिखा होगा पण्डित जी।" मूरतसिंह बोल उठे—"उस समय के महर्षि मूर्ख नहीं थे जो आजकल के समाज-सुधारकों की तरह चिल्लाते फिरते—दहेज लेना पाप है....दहेज समाज का कोढ़ है...."

"पहले के महर्षि ढोंगी नहीं थे, जो आधुनिक समाज-सुधारकों की तरह 'हाथी के दाँत खाने के और—दिखाने के और' वाली कहावत चरितार्थ करते....सुना कि नहीं।"

"सुना पंडित जी।" मूरतसिंह ने मुँह खोला—"मेरे साले खोड़ासिंह, नेता कहलाते हैं और उन्होंने अपने सुपुत्र पलटनसिंह का विवाह एक मास में ही तीन जगह करके लाख रुपये से अधिक जमा कर लिये।"

"वह तो मेरी मेरी राय के बिना एक कदम आगे नहीं बढ़ाते.... सुना कि नहीं।" धर्मपाल पंडित उमंग से भर गये। बोले—"उनके लाड़ले की तीन शादियाँ मेरी सलाह से ही हुई थीं। जब वे महाप्रभु चार सौ बीस की शरण में जाने से हिचकिचाने लगे तो मैंने ही उन्हें हिम्मत की भंग पिलाई थी....सुना कि नहीं...."

"सुना...."

"उनका कहना था—पंडित जी, तीन-तीन लड़काएँ मेरे गाय की तरह सीधे लाड़ले के गले में ढोल बनकर लटक जायेंगी...."

"मैंने उन्हें डाँट कर, कहा—धत्त महाराज, आपकी बुद्धि तो हवा खाने गई है। राजा दशरथ की साढ़े तीन सौ रानियाँ थीं, जो भगवान के बाप थे। आप उनके वंशज होकर, बेटे की तीन शादियाँ करने से जी चुरा रहे हैं—यह तो चुल्लू भर पानी में डूब मरने की बात है।" उसके बाद ही उन्होंने कमर कसी और रुपये का ढेर लगा दिया....सुना कि नहीं।"

"सुना और गुना भी...." मूरतसिंह ने दृढ़ संकल्पी की तरह कहा—"मैं अपने साले से कभी पीछे न रहूँगा, पंडित जी। उन्होंने अपने बेटे की तीन शादियाँ की तो मैं अपने का नौ विवाह करूँगा।"

"शाबाश।" धर्मपाल पंडित उछल पड़े। बोले—"अलबत्ता आप साहसी मर्द हैं सरकार। मैं भी इस पवित्र कार्य में हाथ बटाऊँगा.... सुना कि नहीं।"

"जरूर-जरूर।" मूरतसिंह ने कहा—"आप जैसे धर्मात्मा लोग तो बाबा आदम के समय से हमारे जैसे यजमानों पर कृपा की छाया करते आए हैं फिर अपनी पुरानी आदत आप क्यों छोड़ देंगे। पेट-पूजा के लिए दही-चिउरा और मालपुआ ही नहीं लड्डू, इमरती, गुलाबजामुन और रसगुल्ले भी मिलेंगे।"

"हा....हा....हा....हा...." हँस पड़े धर्मपाल पंडित। हँसते हुए

बोले—"पेट तो भैंस भी भर लेती है सरकार....सुना कि नहीं। ब्राह्मण का कर्म दान लेना भी है....सो हर विवाह में हजार रुपये दक्षिणा लूँगा....हर विवाह में महाप्रभु चार सौ बीस की खुशामद करनी होगी और उल्टा-सीधा पाठ पढ़ा कर, आँखों में धूल भी झोंकना होगा.... सुना कि नहीं।"

"सुना।" सूरतसिंह बोल उठे—"मौका आने पर मैं आपको खुश करके छोड़ूँगा। अब आप आने वाली आफत को टालिए...."

"कैसी आफत?" चौंक पड़े धर्मपाल पंडित।

"गाँववालों के सर पर आजादी का भूत सवार है।" सूरतसिंह ने मन्द स्वर में कहा—"वे अब मेरे सर चढ़ने का प्रयत्न कर रहे हैं। उनके दिल से डर निकलता जा रहा है। अपनी बुद्धि का चमत्कार दिखाइए जिससे उनके सर पर मेरा रोब चढ़ बैठे और वे मेरे इशारे पर नाचते रहें—"

"बस-बस, अधिक कहने की आवश्यकता नहीं—मैं सब समझ गया यजमान....सुना कि नहीं। ऐसा रंग जमाऊँगा कि आप भी मेरा मुँह निहारने लगेंगे...."

"मुझे आपकी पंडिताई पर भरोसा है पंडित जी।"—सूरतसिंह बोले।

"यजमान, अब पेट में चूहे दौड़ रहे हैं....सुना कि नहीं।"

और सूरतसिंह गरज उठे—"टुनटुनवा!....गाँव में जाकर मर गया ससुरा। आ जाय तो जूतों से खबर लूँगा।"

"मैं आ गया धर्मावतार...." टुनटुनवा ने कमरे में प्रवेश किया।

"धर्मावतार के बच्चे! इतनी देर तक मुँह भरा रहा था। जा, पंडित जी को हवेली में ले जा! गरीब ब्राह्मण को भूखों मार डाला हरामजादे ने....हाँ, पहले चिलम बढ़ा दे इधर...."

एक तो करैला आप तीता दूजे नीम चढ़ा

भूखला अपने बैलों को घर में बाँध बुढ़वा पीपल की ओर चला। वहाँ बाबू मूरतसिंह की ओर से अखण्ड हरिकीर्त्तन का आयोजन था। उसे उसके बैल मिल गये थे, खेत भी बटाई जोतने के लिए वापस मिल गया था किन्तु कबूतरी उसके हाथ से निकल गई थी। बाबू मूरतसिंह ने न जाने उस पर कैसा जादू कर दिया कि हवेली से भूखला की झोंपड़ी में जाने का नाम ही नहीं लेती....

वह बुढ़वा पीपल के पास पहुँचा। वहाँ प्रकाश के लिए विशेष प्रबन्ध होने के कारण उजाला-ही-उजाला था, किन्तु उसके मन में तो अँधेरा-ही-अँधेरा था।

पीपल के नीचे दो-तीन सौ की संख्या में स्त्री-पुरुष एकत्र थे। धर्मपाल पंडित का ठाटबाट देखने योग्य था। कदली-स्तंभों के घेरे में एक ऊँचा आसन बना था। आसन पर पंडित जी डटे हुए सिद्ध-पुरुष प्रतीत होते थे। गले में फूलों की मालाएँ और माथे पर चन्दन-तिलक।

अचानक पंडित जी ने मुँह खोला और उपस्थित ग्रामीण नर-नारियों की बतकही भाग खड़ी हुई।

उपस्थित भाइयो और माताओ-बहनो!

हरिकीर्त्तन शुरू होने के पहले मैं दो शब्द आपसे कह देना चाहता हूँ। आशा है, आप लोग ध्यानपूर्वक उसे श्रवण करेंगे.... सुना कि नहीं....

....सबसे पहले मैं उस लीलामय वृन्दावन विहारीलाल के नाम का स्मरण करता हूँ, जिनके नाम के प्रताप से गणिका और अजा-

मिल जैसे पापी भी भवसागर से पार उतर गये....सुना कि नहीं.... और जिनकी दयालुता से लाभ उठाकर, बड़े-बड़े धूर्त, लम्पट अपना उल्लू सीधा किया करते हैं....सुना कि नहीं....उसके बाद मैं ईश्वर के अंश बाबू मूरतसिंह को प्रणाम करता हूँ, जो गाँव के जमींदार ही नहीं मुखिया भी हैं। वह आग हैं तो आदित्य भी, मृत्यु हैं तो वैश्रवण भी... सुना कि नहीं....इन्हीं को 'यम' भी कहा जाता है....

ग्रामीणों की चौकन्नी निगाहें पण्डित के मुख पर जम गई। पण्डित मुँह से उगलते गये—

"....आप लोगों को अचरज हो सकता है, मगर अचरज की कोई बात नहीं। यह बात उसी तरह सत्य है, जिस तरह हमलोग इस बुढ़वे पीपल के नीचे बैठे हुए हैं....सुना कि नहीं....

"....बाबू मूरतसिंह इसलिए 'आग' नहीं हैं कि वे बात-बेबात गरमाते हैं या अंगारों पर लोटते हुए अगिया-बैताल बन जाते हैं.... बल्कि महाभारत जी में व्यास जी के लिखने के अनुसार वे आग इसलिए हैं कि अपने रोब और काबू से गाँव के अपराधियों को जाड़ा-बुखार ला देते हैं और अपने पराक्रम की आग से जनता की छाती पर सवार रहते हैं....सुना कि नहीं...."

टुनटुनवा अपने स्वामी के साथ वहाँ दर्शक रूप में उपस्थित था। वह आवेश में उछलकर ताली बजाने लगा और अन्य लोगों लोगों से भी अपने अनुकरण के लिए संकेत किया। फिर तो तालियों की गड़गड़ाहट से कौए उड़ाने का दृश्य उपस्थित हो गया।

"....सुना कि नहीं...." धर्मपाल पण्डित उत्साह से भर गये। उनके मुँह से पुनः शब्दों की फुलझड़ी छूटने लगी—"बाबू मूरतसिंह को व्यास जी ने महाभारत जी में इसलिए आदित्य अथवा 'इन्द्र' लिखा कि वे अपने लठैतों अथवा यमदूतों से अपने असामियों पर शासन करते हैं और दूसरे की कमाई पर पाँचो उँगलियाँ घी में

डुबाते अथवा 'जय सियाराम–जय जय सियाराम' भजते हैं....सुना कि नहीं....

"....और वे 'काल, अथवा 'मृत्यु' इसलिए हैं कि जब उनके सिर पर क्रोध का भूत सवार होता है, अपने विरुद्ध सर उठानेवाले पापियों अथवा महाअधर्मियों के दाँत खट्टे करते या छट्ठी का दूध याद करा देते हैं....सुना कि नहीं....

"बाबू मूरतसिंह धन्य हैं, जिनको व्यास जी वैश्रवण अथवा 'कुबेर' कहते हैं सुना कि नहीं। वे 'कुबेर' इसलिए हैं कि बेगार, माल-गुजारी, सूद आदि के रूप में धन हरण करते और पंडित, पतुरिया आदि को कुछ दान कर यश लूटते हैं....सुना कि नहीं....

"गाँव में बुरे कर्म करनेवालों अर्थात् दूसरे के खेत के पौधे भैंसों से चरानेवाले बदमाश चरवाहों, बोझा चुरानेवाले चोरों आदि को दंड देते हैं इसलिए वे 'यम' अर्थात् धर्मराज हैं....सुना कि नहीं.... महाभारतजी के रचयिता व्यासजी के लिखने के अनुसार बाबू मूरत-सिंह को युधिष्ठिर कहने में संकोच नहीं करना चाहिए। जो लोग ऐसे धर्मराज के खिलाफ सपने में भी बुरा विचार रखेंगे, उन्हें यमदूत नरक में ले जाकर कचूमर बना देंगे....सुना कि नहीं...."

टुनटुनवा ने फिर ताली बजायी और गाँववालों ने फिर उसका अनुकरण किया।

"....सुना कि नहीं।" पंडित जी प्रसन्न मुद्रा में बोले—"भाइयो, मैं लाख रुपये की एक कथा सुनाकर, हरिकीर्त्तन का कार्य आरंभ करूँगा....सुना कि नहीं। कल से आप लोग अधिक-से-अधिक संख्या में अर्थात् भाटे के झुण्ड की तरह एकत्रित होंगे....

"हाँ तो सुनिए—वृन्दावन बिहारीलाल की कृपा से, एक समय कोई राजा, सरदार या जमींदार नहीं था अर्थात् उस समय अराजक

अवस्था थी....सुना कि नहीं। उस समय 'यह मकान मेरा है और वह झोंपड़ी तेरी है'—'यह खेत मेरा है और वह परती तेरी है'—कहने वाला कोई माई का लाल पैदा नहीं हुआ था....सुना कि नहीं। ....कुछ भले मानसों के दिल में पवित्र भाव उत्पन्न हुआ और उन लोगों ने एक जुट होकर, ईश्वर अर्थात् स्वामी का अभाव स्वीकार किया ...सुना कि नहीं। वे लोग मनु के पास पहुँचे और अपना पवित्र उद्देश्य सुना कर, उन्हें 'राजा' बनकर शासन की बागडोर पकड़ने की सलाह दी....सुना कि नहीं....

"....मनु तो भय से ऐसे उछल पड़े जैसे पाँव के नीचे साँप पड़ गया हो। उन्होंने घबड़ाहट में सिर हिलाते हुए कहा—नहीं-नहीं, मैं ऐसा पाप-कर्म नहीं करूँगा।"

"....तब जनता-जनार्दन ने एक साथ होकर प्रार्थना की—प्रभो! आप डरें मत। हम अपने पशुओं का पाँचवाँ भाग और धान्य का दसवाँ हिस्सा आपको दिया करेंगे। यौवन के आँगन में प्रवेश करती हुई सुन्दरियों में से हजार में एक चुन-चुन कर, आपकी हवेली में पहुँचायी जायँगी। बलवान मनुष्य हथियार सँभाले आपकी रक्षा में तत्पर रहेंगे....सुना कि नहीं....

"और तब मनु ने राजा बनने का साहस किया। इस प्रकार राज्य की प्रथम नींव पड़ी। उसी मनु के वंशधर हैं आपके गाँव के जमींदार बाबू मूरतसिंह। एक बार गले का नस तोड़ते हुए चिचि-याइए—बाबू मूरतसिंह की जय ...!"

और बाबू मूरतसिंह की जय जयकार सुनकर सियार माँद में दुबक गये।

टुनटुनवा की दृष्टि भूखला पर पड़ी। वह काठ की मूरत की तरह एक ओर चुपचाप खड़ा था। वह उसके पास पहुँचा। तपाक से

बोला—"अरे भतीजे, तूने इस खुशियाली के समय क्यों मुँह लटका रखा है ?....

"चाचा !...." भूखला इससे अधिक बोल न सका। बात उसके गले में ही अँटक गई।

"भतीजे ! मुझे तेरे मन के चोर का पता है।" दुनदुनवा ने चेतावनी भरे स्वर में कहा—"कबूतरी का ख्याल दिल से निकाल दे—इसी में तेरी भलाई है। शादी करना चाहे तो संसार में औरतो की कमी नहीं...."

उसी समय 'जयसियाराम-जय-जयसियाराम' की ध्वनि गूँज उठी। पंडित धर्मपाल जी ने हरिकीर्तन का कार्य आरम्भ कर दिया था। दुनदुनवा बोल उठा—"अब खड़ा-खड़ा मुँह मत देख। चल, भगवान का नाम लेकर जीवन पवित्र कर ले...."

और वह भूखला की बाँह पकड़ हरिकीर्तन गाते लोगों के झुण्ड में मिल गया। वे दोनों भी अन्य लोगों के स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगे—'जयसियाराम-जय-जयसियाराम....'

दूसरे दिन बाबू मूरतसिंह ने ढिंढोरा पिटवाया—"पंडित धर्मपाल जी त्रिवेणी-संगम पर एक महायज्ञ करने का प्रण ठान चुके हैं, जिसमें सवा-सौ मन घी, सवा-सौ मन धूप, सवा-सौ मन जौ और सवा-सौ मन तिल अग्नि-देव पर न्योछावर किये जायँगे। इसलिए गाँव के प्रत्येक निवासी पंडितजी का प्रण पूर्ण करने के लिए जी खोलकर दान दें...."

आशीर्वादों की बौछार करते धर्मपाल पंडित बाबू मूरतसिंह के पास पहुँचे। गद्‌गद्‌ स्वर में बोले—"जय हो यजमान....सुना कि नहीं। मेरे बेटे के बेटे और उनके पोते भी सरकार के नाम की माला जपते रहेंगे....सुना कि नहीं।"

और मूरतसिंह उत्साह से भर गये। दुनदुनवा के सिर पर हलकी

चपत लगाते हुए, बोल उठे—"हरामजादे, कोंहड़े की तरह बैठा क्यों है ? बढ़ा चिलम !...."

टुनटुनवा ने फौरन आग रखकर चिलम मूरतसिंह के हाथ में पकड़ा दी। मूरतसिंह गाँजे का दम लगा ही रहे थे कि टुनटुनवा खुशी से उछल पड़ा—"हुजूर, छोटे सरकार की सवारी आ गई।"

सभी की निगाहें बैठकखाने के सामने चली गईं। एक बैलगाड़ी से एक युवक उतर रहा था। उसके बाद एक युवती भी गाड़ी से उतरी।

"टुनटुनवा !" मूरतसिंह चौंक पड़े—"छोटे सरकार के साथ वह कौन है बे ?"

"धर्मावतार, यह तो छोटे सरकार ही बतला सकेंगे।"—टुनटुनवा सशंकित हो उठा। दाल में काला दिखाई पड़ता है !

"कोई पतुरिया जान पड़ती है...."

धर्मपाल जी ने अक्ल के घोड़े दौड़ाये।

"पतुरिया ?"—मूरतसिंह के पाँव तले से धरती खिसक गई।

"हाँ, गरीब-परवर। रंग-ढंग से तो पतुरिया ही जान पड़ती है। देखते नहीं, उसकी आँखों में तनिक भी शर्म नहीं....चेहरे पर घूँघट नहीं....सुना कि नहीं। जवान बेटे को साँड़ की तरह आजाद छोड़कर आपने अच्छा नहीं किया सरकार...."

"टुनटुनवा ! मेरी बन्दूक तो ले आ...." गरज उठे मूरतसिंह—"दोनों को मौत के घाट उतार दूँ। न रहे बाँस न बजेगी बाँसुरी...."

टुनटुनवा काँप उठा। वह जहाँ का तहाँ बैठा रह गया।

बैठकखाने के द्वार पर वे दोनों ठिठक गये। युवक ने काँपते हुए स्वर में कहा—"पिता जी !"

"खबरदार जो मुझे पिता जी कह कर पुकारा।" मूरतसिंह अगिया बैताल बन गये। बोले—"तू ने मेरे मुँह पर कालिख पोत दी। पतुरिया को लेकर साथ घूम रहा है...."

"पतुरिया?" युवक की आकृति पर एक साथ ही अचरज और क्षोभ के भाव पैदा हुए—"कहाँ है पतुरिया? आप होश में तो हैं?"

बाबू मूरतसिंह अकचकाये। पूछ बैठे—"यह तुम्हारे साथ कौन है?"

"यह तो आपकी पतोहू है।" युवक ने उत्तर दिया।

"पतोहू!" मूरतसिंह ने क्रोधावेश में माथा पीट लिया। बोले—"तो तुझे इसीलिए पढ़ाया कि तू अपने मन से अपना विवाह कर ले! डूबा वंश कबीर का जो उपजा पूत कमाल।"

"पिता जी!" युवक ने कहा—"विवाह मुझे करना था...."

और उसके मुँह की बात छीनकर मूरतसिंह गरज उठे—"मेरी आँखों के सामने से अपना काला मुँह दूर ले जा! अब तेरे लिए मेरे घर का द्वार बन्द हो गया। तुझे मेरी जायदाद से फूटी कौड़ी भी न मिलेगी।"

"जो आज्ञा, पिता जी!" युवक बोल उठा—"मैं तुरत वापस लौट जाऊँगा। मुझे आपके धन की लालच नहीं। आपकी पतोहू एक करोड़पति सेठ की इकलौती बेटी है...."

"करोड़पति सेठ की इकलौती बेटी!" मूरतसिंह की आँखें विस्मय और प्रसन्नता से खुली की खुली रह गईं।

"हाँ।" युवक बोला—"मेरे श्वसुर मुझे घरजमाई बना चुके हैं। आपके लिए ससुरजी ने सवा लाख का चेक भेजा है...."

"धर्मावतार, मुँह क्या देखते हैं!" धर्मपाल जी बोले—"अब

तो आपकी पाँचो उँगलियाँ घी में हैं। उठकर बेटे को गले लगाइए। भगवान देता है तो छप्पर फाड़कर....सुना कि नहीं।"

बाबू मूरतसिंह ने हर्षावेग में युवक को छाती से चिपका लिया। बोले—"मेरे लाल! तू कुल का दीपक है। युग-युग जिये...."

—बस—